ओ३म्

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

हिन्दी मासिक

वर्ष : ३ अंक : ३४ १ अक्टूबर २०१७ जोधपुर (राज.) पृ.:३६ मूल्य १५० ₹ वार्षिक

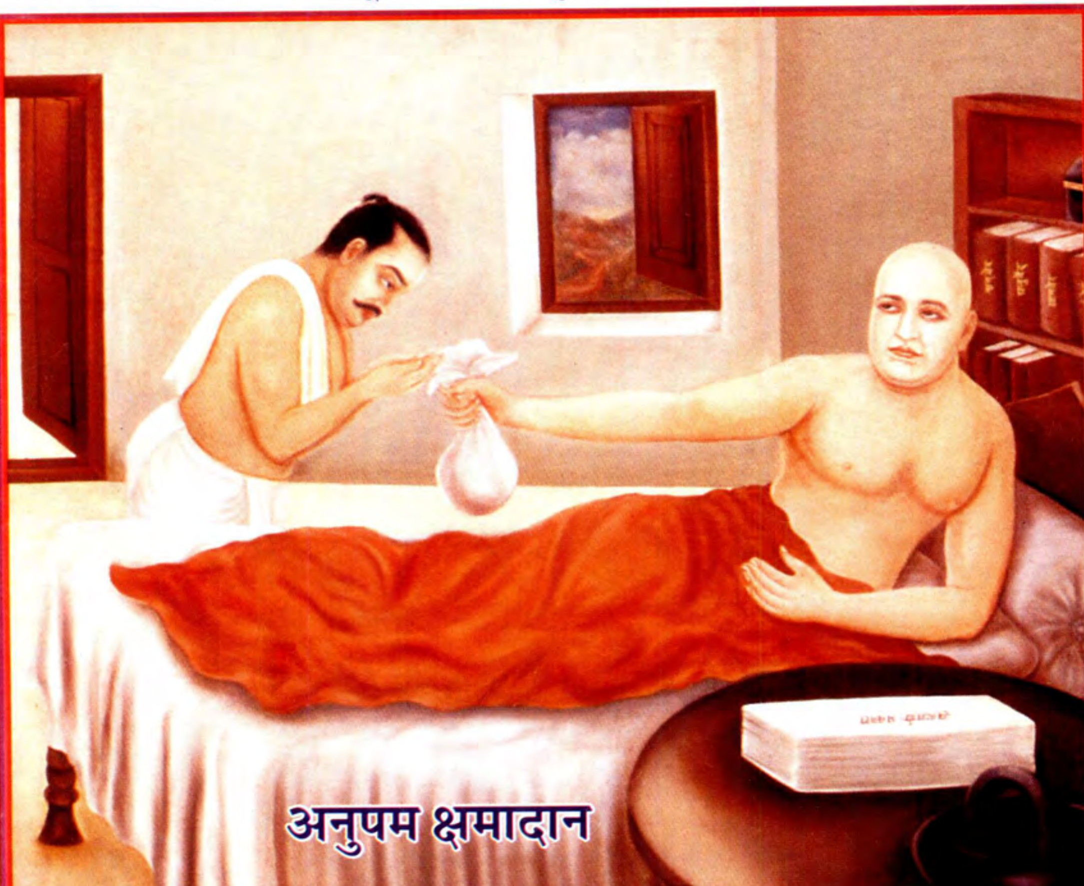

कार्यालय :
महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास
जसवन्त कॉलेज के पास, मोहनपुरा, जोधपुर

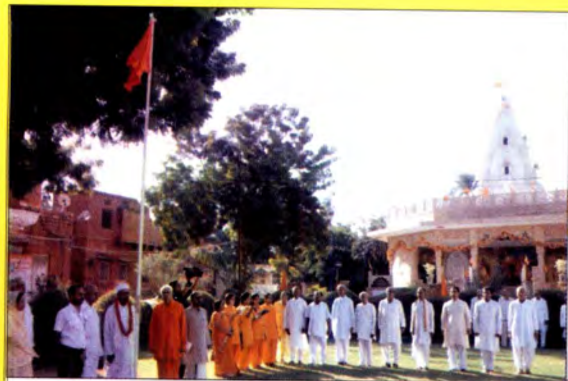

आचार्य श्री मनुदेव जी, प्रबंधक गुरुकुल आश्रम आमसेवा, उड़ीसा व मंचस्थ विद्वान्

अतिथि लक्षण व अतिथि यज्ञ विषयक सम्मेलन में मंचस्थ विद्वान एवं वक्ता

चरित्र निर्माण विषय पर व्याख्यान करते हुए स्वामी वेदानंद महाराज जी एवं मंचस्थ विद्वान्

प्रभुभक्ति से जीवन उत्थान पर चर्चा करते हुए डॉ. वेदपाल जी एवं मंचस्थ विद्वान

श्री सत्यानन्द जी वेदवागीश जी एवं मंचस्थ विद्वान्

आचार्य चन्द्रेश जी एवं मंचस्थ विद्वान्

डॉ. वेदपाल जी एवं मंचस्थ विद्वान

कृण्वन्तो विश्वमार्यम् । -ऋग्वेद ९।६३।५

सबको श्रेष्ठ बनाओ

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश का मुख्य प्रयोजन

महर्षि दयानन्द सरस्वती के व्यक्तित्व, कृतित्व, व उनके द्वारा लिखित समस्त साहित्य तथा उनके सार्वभौमिक अद्वितीय कार्यों व सिद्धांतों का प्रचार-प्रसार, स्थापना व व्यवहार में साकार करने के लिये कार्य करना ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर का मुखपत्र

महर्षि दयानन्द स्मृति प्रकाश

वर्ष : ३ अंक : ३४

दयानन्दाब्द : -१९४

विक्रम संवत् : कार्तिक २०७४

कलि संवत् ५११८

सृष्टि संवत् :१,९६,०८,५३,११८

मार्गदर्शक

पं. सत्यानन्दजी वेदवागीश,

सम्पादक मण्डल :

प्रा. राजेन्द्र जिज्ञासु, अबोहर

डॉ. सुरेन्द्रकुमार, हरिद्वार

डॉ. वेदपालजी, मेरठ

पं. रामनारायण शास्त्री, सिरोही

आचार्या सूर्यादेवी चतुर्वेदा

कार्यवाहक सम्पादक :

कमल किशोर आर्य

Email: sampadakmdsprakash@gmail.com

9460649055

प्रकाशक :

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जसवन्त कॉलेज के पास, जोधपुर ३४२००१

लेख में प्रकट किए विचारों के लिए सम्पादक उत्तरदायी नहीं है । किसी भी विवाद की परिस्थिति में न्याय क्षेत्र जोधपुर ही होगा ।

Web.-www.dayanadsmritinyas.org.

वार्षिक शुल्क :१५० रुपये

आजीवन शुल्क : ११०० रुपये (१५वर्ष)

अनुक्रमणिका

क्या	कहाँ
१. सम्पादकीय	४
२. स्तुति विषय	८
३. वेद वचन	९
४. चार पुरुषार्थ ...	११
५. आर्य समाज का इतिहास ...	१२
६. १३४ वां ऋषि सम्मेलन सम्पन्न	१६
७. भवन का लोकार्पण	१८
८. आसमान छू रहा है ओ३म् ध्वज	२०
९. पुरुषार्थ को प्रोत्साहन	२१
१०. प्रथम सम्मेलन....	२२
११. द्वितीय सम्मेलन....	२४
१२. तृतीय सम्मेलन.....	२६
१३. चतुर्थ सम्मेलन.....	२९
१४. पंचम सम्मेलन....	३२

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास

बैंक ऑफ बडौदा खाता संख्या-01360100028646

IFSC BARB0JODHPU

यह पांचवा अक्षर जीरो है

संपादकीय

आसुरी भावों की अमोघ औषधः देव दयानंद

वैदिक व्यवस्था को लागू करने का तात्पर्य है वर्णाश्रम धर्म को ठीक ठीक रूप से लागू करना। वर्णाश्रम व्यवस्था में आए विकार, वैदिक व्यवस्था हेतु विष का कार्य करते हैं। गुरुकुल और आश्रम वर्णाश्रम धर्म की काया है। गृहस्थों की दानशीलता के साथ चरित्र की निर्भय दृढ़ता व यम नियमों का पालन इसके प्राण हैं। जब तक ये काया और प्राण रहे, वर्णाश्रम धर्म रहा और तत्परिणामस्वरूप वैदिक व्यवस्था भी रही।

महाभारत युद्ध के पूर्व ही वैदिक व्यवस्था के प्रचलन में कमी आ चुकी थी। महाभारत के बाद तो अवस्था बिगड़ती ही गई। महर्षि के मतानुसार नियामक होने के नाते राजा या क्षत्रिय को वेद शास्त्रों का अध्ययन अवश्य करना चाहिए, ताकि कोई मार्गदर्शक धूर्त ब्राह्मण उन्हें पथभ्रष्ट ना कर सके। किंतु महर्षि के विचारों के विपरीत ऐसा हो चुका था। नीति के नियामक राजा व प्रशासक भी वेदाध्ययन तो दूर, विद्याध्ययन के श्रम से भी जी चुराने लगे। ब्राह्मण भी दम और तप से परे हुए अत: वेदविद्या उनसे परे हो गई। वेदाध्ययन छूटा तो पाखंड बढ़ा, षड्रिपुओं की बन आई। गुण कर्म स्वभावाधारित वर्ण व्यवस्था का स्थान जन्मना जाति व्यवस्था ने ले लिया। वेद ज्ञान से हीन राजाओं और क्षत्रियों को धूर्त जन्मना ब्राह्मण मदिरा में गंगाजल डाल उसे पवित्र कर पिलाने लगे। यह बात अलग है कि मदिरा पवित्र हुई या गंगाजल अपवित्र! अक्ल के ऐसे अंधों को विष्ठा में गंगाजल मिलाकर देना चाहिए ताकि उनको पता चले कि पवित्रता और अपवित्रता क्या होती है!

ब्राह्मण और क्षत्रिय के रूप में जब समाज रूपी शरीर के शिर और भुजाएँ भ्रष्ट हो चुकीं, तो शरीर को बिगड़ना ही था।ऋषियों के बनाए यम-नियमों का आचरण छूटते ही आश्रम व्यवस्था ध्वस्त हो गई। जब गुरु, गुरुकुलों को छोड़ राजकुलों में आ गए, तो दुर्योधन, दु:शासनादि सहज उत्पाद हुए और युधिष्ठिर जैसे लोग सहउत्पाद या अपवाद।

व्यवस्था में विकार का प्रभाव व्यक्ति व परिवार से लेकर समष्टि के बड़े से बड़े रूप और राज्य तथा राष्ट्र तक होता है, कुछ भी अछूता नहीं रहता। लोग त्याग व पुरुषार्थ से भयभीत होते हैं अत: महान लोगों को आदर्श मानने के स्थान पर उन्हें अतिमानवीय और ईश्वर तक बताकर, उनके चित्रों व प्रतिमाओं से बच्चों की तरह खेलते हैं और उसे शास्त्रीय विधान का नाम देते हैं। इन महापुरुषों के चरित्र के अनुसरण को असंभव बता समाज को भ्रष्ट कर रहे हैं। समाज को समर्पित ब्रम्हचारी, परमात्मचिंतन में लगे वानप्रस्थ और संसार के उपकार का पावन कार्य करने वाले सन्यासियों का स्थान भिक्षुकरूप में रावणों ने ले लिया है। साठ लाख से भी अधिक गेरुआधारी निकम्मी फौज है, जिनसे ना समाज को कुछ मिलता है ना राष्ट्र को। भिक्षा से नशे करते हैं, जुआ खेलते हैं, अभक्ष्य लाते हैं और खा कर सो जाते हैं।

शिक्षा सिर्फ बिकाऊ है। राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त के शब्दों में "बिकती यहाँ शिक्षा अहो, जो शक्ति है तो क्रय करो। यदि शुल्क आदि न दे सको, तो मूर्ख रहकर ही मरो।।" शिक्षा प्राप्त भी कर ली, तो

परिणाम भी उनके शब्दों में सुनिए: – ''दासत्व के परिणाम वाली आज शिक्षा है यहाँ, है दो ही केवल जीविकाएँ, भृत्यता भिक्षा यहाँ।।'' शिक्षा अर्जित करके भिक्षावृति करने वाले लोग ही देश में बैठे हैं–बेरोजगार भी और बारोजगार भी। जो सरकारी बारोजगार है उनका काम तनख्वाह से चलते हुए भी रिश्वत रूपी भिक्षा लेते हैं और जो बेरोजगार है वे तो भिक्षुक है ही।

सर्वोत्तम प्रतिभाएँ धन के बदले विदेश–सेवा कर रहीं हैं। देश की व्यवस्था को सुधारने के लिए उनके पास न समय है न इच्छा शक्ति। देश के प्रति अपने कर्तव्य की इति श्री विदेश में उपलब्ध अधिक धनार्जन के अवसर को भुनाकर कर लेते हैं। सुधार हेतु संघर्ष करने के स्थान वे अव्यवस्था को न सिर्फ कोसकर अपने कर्तव्य की इतिश्री कर लेते हैं वरन् अपनी विदेशपरस्ती का कारण भी अपने लालच की बजाय देश की अव्यवस्था और भ्रष्टाचार को बताते हैं। चूंकि शिक्षा धन ही का परिणाम रह गई है। अत: इसके उत्पाद भी ''टका धर्मश्टका कर्म....'' के अनुयायी हैं।

म्लेच्छों, अंग्रेजों आदि विदेशी आक्रांताओं ने इस देश को लूटा, क्योंकि वे शत्रु थे। किन्तु स्वतंत्रता पश्चात पथभ्रष्ट हुए भारतीय शासक भी सत्ता पाकर घोटालों से लूट रहे हैं। सत्ता में बैठे लोग, उनके चाटुकार और चमचे भी अपना घर भर रहे हैं। जनसाधारण कर्जों से मरे जा रहे हैं। पैसे के बिना कुछ भी सुलभ न होने से आधी आबादी रोटी, कपड़ा, मकान, शिक्षा, चिकित्सा और सुरक्षा से वंचित है। चरित्र ऐसा गिर चुका है कि एक पड़ोसी भी अपने घर की बहन बेटी के मामले में दूसरे पड़ोसी पर विश्वास नहीं कर सकता। दुधमुँही बच्चियों से दुराचार होता है। विद्यार्थी विद्यालय में सुरक्षित नहीं है।

जड़ की उपासना से तो जड़ता के अतिरिक्त कुछ मिल नहीं सकता(अत: जीवन के उत्थान के मार्ग भी अवरुद्ध) है। मिट्टी और पत्थर भगवान बन गए हैं, पंचमकारों से उपासना होती है। वेदविमुख हो जाने से, पुरुषार्थ चतुष्ट्य के लक्ष्य से भ्रष्ट होने से, षड्रिपुटों के दास बनने से, ब्रह्मयज्ञ का स्थान वयस्क बच्चों द्वारा भी गुड्डे गुड़ियों के खेल, टी.वी. और दुर्व्यसनों ने ले लिया।

न सिर्फ मानव के, वरन् प्राणी मात्र के कल्याण और उत्थान हेतु वेदविद् महर्षियों ने मानव मात्र के लिए पंच महायज्ञ के परम कर्त्तव्य का विधान किया था। किंतु ब्रह्मयज्ञ में निहित संध्या का हाल यह है कि आर्यसमाज के विद्वानों और योगाचार्यों के सम्मुख स्वयं आर्यसमाजियों की यह समस्या सामने आती है कि ध्यान लगता ही नहीं है। अन्यत्र कोई मेंढक की तरह उछालकर ध्यान लगवाता है तो कोई सरे बाजार दुकान में बैठे दुकानदार को ''अऽऽ..'' का उच्चार करके ध्यान लगाना सिखा रहा है। एक मूर्तिपूजक भी सामने पड़ी मूर्ति के सामने आँखें बंद करता है। यह अवशेष है उस संस्कार का कि नेत्र की तरह अन्य इंद्रियों को बाहर की तरफ जाने से रोक कर प्रतिबोध– पूर्वक ध्यान होता है। रही बात ब्रह्मयज्ञ के दूसरे अंग स्वाध्याय की तो आर्यसमाज के जलसों में आए पुस्तक विक्रेता आयोजकों से मार्गव्यय तक की अनुनय करते देखे जाते हैं कि बिक्री नहीं हुई। नशे और अग्राह्य आदतों को अपनाने वालों की बात मैं नहीं करता, एक सामान्य जन एक वर्ष में लगभग डेढ़ हजार रूपये अखबार पर तो खर्च करता ही है, जो कुछ दिन बाद नहीं मिलते। किसी जलसे में उससे आधे मूल्य की पुस्तकें खरीदकर घर ले जाय तो उसकी बहुत सी पारिवारिक

समस्याएँ भी परे रह सकती है और समाज का भी भला हो।

देवयज्ञ में निहित देवपूजा का स्थान अगरबत्ती के धुएँ, दीपक की लौ, तथाकथित पूजा से वायु-जल-पृथिवी के प्रदूषण मात्र न ले लिया है। पर्यावरण शुद्धि के सर्वोत्तम उपाय यज्ञ को छोड़कर वायु, जल, पृथ्वी दूषक उपायों को नित्य कर्म मान लिया है। मानव स्वयं उपास्य का निर्माण करता है, उसमें प्राणों की प्रतिष्ठा करता है और फिर जल में डूबो देता है। संगतिकरण के नाम पर विवेकहीन, अन्धश्रद्धालुओं की अपार भीड़ एकत्र कर, सत्यज्ञानरूप वेदविद्या से दूर रख उनका तन-मन-धन हड़पना तथा दान का स्थान अंधों की रेवड़ी (जैन भिक्षुक घर के द्वार पर स्वस्तिक और अहिंसाचक्र युक्त हाथ वाला प्रतीक लगा) देखकर तो मुस्लिम फकीर मुसलमान का घर देखकर भिक्षार्थ द्वारा खटखटाते हैं वक्फ बोर्ड का पैसा गैरमुस्लिम को नहीं जाता इत्यादि कई उदाहरण हैं ने ले लिया है।

पितृयज्ञ का स्थान सोलह दिन के श्राद्ध पक्ष के पाखंड ने ले लिया है। जीवित माता-पिता व बड़ों की उपेक्षा कर मृत पुरखों को माल मलीदे खिलाने का ढोंग करते हैं। अब बात मात्र श्रीराम और श्रीकृष्ण जैसे आदर्शो के अतिमानवीय करण की नहीं रह गई है। जीवित तो पितरों का भी तिरस्कार करते हैं, लेकिन मर जाने पर अपराधी संबंधी को भी देवता मान लेते हैं, बना देते हैं और भोली जनता को भी अंधश्रद्धालु बना लूटना शुरू कर देते हैं। लोकदेवाताओं के साथ साथ अन्य कई अपराधियों और व्यसनों के साक्षात् अवतारों के मरने के बाद बने उनके आधुनिक थानक इसके उदाहरण है।

जिस देश और दुनिया में प्रीतिदायक प्रात: ही करोड़ों मूक प्राणियों की करुण पुकार से पीड़ादायक बन जाती है (जिनका परम धर्म "अहिंसा" है, वे देश के विशालतम बूचड़खानों के मालिक हैं जहाँ गोमांस खाने की घोषणा बेशर्मी से की जाती है) वहाँ कीड़ीनगरा डालने, कबूतर को चुग्गा डालने, मछलियों को आटा डालने, गौशालाओं या खाना बनातीं माताओं बहनों द्वारा पहले पके भोजन का भाग तवा उठाकर अग्नि को समर्पित करने रूपी बलिवैश्वदेव यज्ञ के अवशेषों को भी देखना अच्छा लगता है।

अतिथियों के रूप में भिखारी और ठग आते हैं तो आतिथेय भी घर आये अतिथि से पूछते हैं- किस होटल में ठहरे हैं? वापसी का टिकट कराना है क्या? किन्तु अतिथि देवो भव मानने वाले भी है। सार्थकता तो अतिथि और आतिथेय दोनों के देव बनने में है।

जहाँ तक आचरण हेतु समाज में आदर्शो की बात है, श्रीराम और श्रीकृष्ण जैसे हमारे चरित्र नायकों को इतना अतिमानवीय बना दिया है कि अपने वर्तमान आभा के साथ में मिथक बन गए हैं। वह अवतार और मिथक दोनों ही रूप में अनुकरणीय नहीं रह जाते। नायकों का तो अनुकरण अभीष्ट भी है और कर्तव्य भी। श्रीराम और श्रीकृष्ण को हृदय में रखने वाले लोग ही श्रीकृष्ण को चोर जार शिखामणि कहते हैं, श्री राम को शंबूक के हत्यारे, सीता निष्कासन के दागी बताते हैं। अघ्न्या गाय की यज्ञ में बलि का निषेध नहीं है और श्रीराम के मानने वाले लोग भी गोभक्षण को उचित बताकर श्री राम के पूर्वज महाराज दिलीप को ललकार रहे हैं।

ऐसी दुरवस्था के विरुद्ध जब हजारों वर्षो तक कोई सार्थक मार्ग नहीं मिला, समर्थ लोग दुरवस्था

की निंदा भी करते रहे, कुरीतियों को त्यागते भी रहे, किंतु इनकी परतें उखाड़कर मूल शुद्धता के प्रवर्तन के स्थान पर प्रतिक्रिया में अपनी लकीरें खींचते रहे। इसका परिणाम नास्तिक और अज्ञानमूलक मत-मतांतरों की स्थापना के रूप में सामने आया। कालांतर में यही मत मतांतर कटुता, वैमनस्य विरोध और हिंसा के कारण बन अब तक करोड़ों जीवन लील चुके हैं।

पृथिवी से लेकर परमात्मा तक के विषय में विकृतियों का या अज्ञान का बोलबाला है। इससे विवेकवान लोग दुखी और मूर्ख, अत्याचारी, अन्यायी और स्वार्थी लोग प्रसन्न होते हैं। इसी हाल में हम वर्तमान में जी रहे हैं। सच है, वेद ना होने से वेदना ही होती है।

जीवन का उत्थान उदात्त गुण कर्म व स्वभाव को अपना कर ही होता है। उदात्तता का सर्वोत्तम प्रतिमान है परमात्मा और उसीकी उपासना से उदात्त गुणों से मानव परिचित होता है, प्रेरित होता है और उदात्तता को प्राप्त करता हुआ महानता के सोपानों पर चढ़ता है। अवरोधों को हटाना भी है और सत्य मार्ग का दर्शन भी करना है उसे प्रशस्त भी करना है।

उन्नीसवीं सदी के आरंभ में बहन व चाचा की मृत्यु से भयभीत एक युवक ने जब मृत्यु के नियामक पार्थिव शिव को चूहों के सामने असहाय पाया तो उसकी प्रतिक्रिया पूर्व के समर्थ लोगों से कुछ अलग थी। ''मृत्यु सत्य है तो उसका नियामक भी सत्य है!'' पार्थिव शिव समर्थ नियामक नहीं तो उस को त्याग दिया। किंतु सच्चे और समर्थ शिव का अनुसंधान नहीं छोड़ा।

सहस्राब्दियों से जो दृष्टि व्यवस्था से असहमत किसी भी प्रतिक्रियावादी सुधारक या मत प्रवर्तक ने नहीं दी, वह हमारे इस नायक युवक ने प्रदान की। वेदों को ''भस्मासुर'' से मुक्त कराके भी, सच्चे शिव को पाकर भी, कोई अलग मत उन्होंने नहीं बनाया किंतु बन चुके मतों के भी एकीकरण में उन्होंने संसार का कल्याण देखा! अपने ज्ञान पर अभिमान ना कर जिसने सब मतों के अग्रगण्य महानुभावों को सत्य के निर्णय व उसे स्वीकार कर, मानवता के हित में एकमत होने हेतु आमंत्रित किया। मतावलंबियों के क्षुद्र स्वार्थ और संसार के दुर्भाग्य से हमारे नायक महर्षि दयानंद को सफलता ना मिली। किंतु दिव्य दृष्टि का पात्र सम्पूर्ण विश्व को मानते हुए, अविराम गति से उसे वितरित करते हुए महर्षि ने उस दृष्टि को अपने कृतित्व और आर्य समाज के रुप में स्थायीकृत कर दिया। भारत भूमि को अंधकार से निकालने के मिशन पर निकले महर्षि जब जोधपुर में अभियान चला रहे थे, तो महर्षि के अभियान से जिनके स्वार्थ संकट में पड़े, उन लोगों व सत्ताओं ने सुनियोजित रूप से उन्हें विष दिया।

महर्षि की अंतिम कर्मस्थली जोधपुर पर उनका सर्वाधिक ऋण है। जिस स्थल पर महर्षि दयानंद को विष दिया गया, आर्यजगत् को वह स्थान स्मृति के रूप में प्राप्त होने पर वहाँ स्थापित महर्षि दयानंद सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर भी उनके मिशन को आगे बढ़ाने हेतु तसंकल्प है। इसी संकल्प के क्रम में न्यास ने आश्विन शुक्ल पक्ष अष्टमी से द्वादशी संवत् 00 विक्रमी, 28 सितंबर से 2 अक्टूबर 2017 तक क- वाँ ऋषि स्मृति सम्मेलन आयोजित किया। इस सम्मेलन में विद्वन्मुखारविंदनिःसृत पराग का प्रकीर्णन इस अंक में किया जा रहा है। पाठकगण लाभ उठाएँ।

स्तुतिविषय:

तदेवाग्निस्तदादित्यस्तद्वायुस्तदु चन्द्रमाः।
तदेव शुक्रं तद् ब्रह्म ताऽआपः स प्रजापतिः।।४।।

—यजुः ३२।१

व्याख्यान— जो सब जगत् का कारण एक परमेश्वर है, उसी का नाम अग्नि है (**ब्रह्म ह्यग्निः—शपपथे**) — सर्वोत्तम, ज्ञानस्वरूप और जानने के योग्य, प्रापणीयस्वरूप और पूज्यतमेत्यादि अग्नि शब्द के अर्थ हैं "**आदित्यो वै ब्रह्म, वायुर्वै ब्रह्म, चन्द्रमा वै ब्रह्म, शुक्रं हि ब्रह्म, सर्वजगत्कर्तृ ब्रह्म वै बृहत्, आपो वै, ब्रह्मे त्यादि**" शतपथ तथा ऐतरेयब्राह्मण के प्रमाण हैं "तदादित्य:" जिसका कभी नाश न हो और जो स्वप्रकाशस्वरूप हो, इससे परमात्मा का नाम आदित्य है। "**तद्वायुः**" सब जगत् का धारण करनेवाला, अनन्त बलवान् प्राणों से भी जो प्रियस्वरूप है, इससे ईश्वर का नाम वायु है। पूर्वोक्त प्रमाण से "**तदु चन्द्रमाः**" जो आनन्दस्वरूप और स्वसेवकों को परमानन्द देनेवाला है, इससे पूर्वोक्त प्रकार से चन्द्रमा परमात्मा को जानना। "**तदेव, शुक्रम्**" वही चेतनस्वरूप ब्रह्म सब जगत् का कर्ता है, "**तद् ब्रह्म**" सो अनन्त, चेतन सबसे बड़ा है और धर्मात्मा स्वभक्तों को अत्यन्त सुख, विद्यादि सद्‌गुणों से बढ़ानेवाला है। "**ता आपः**" उसी को सर्वज्ञ, चेतन, सर्वत्र व्याप्त होने से आपः नामक जानना। "**सः प्रजापतिः**" सो ही सब जगत् का पति (स्वामी) और पालन करने वाला है। अन्य कोई नहीं, उसी को हम लोग इष्टदेव तथा पालक मानें, अन्य को नहीं।।४।।

—आर्याभिविनय:

लेखकों से निवेदन

इस पत्रिका का उद्देश्य महर्षि मिशन को प्रचारित-प्रसारित करना हैं। आर्य जगत के चिंतकों और लेखकों से निवेदन है कि ऋषि मिशन की पूर्ति में सहयोग हेतु अपनी रचनाओं को प्रकाशनार्थ भिजवाएं। रचनाएँ महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के पते पर या sampadakmdsprakash@gmail.com **के पते पर ईमेल से भी भेजी जा सकती हैं।**

—संपादक

धार्मिकों का संग

त्वमङ्ग प्र शंसिषो देवः शविष्ठ मर्त्यम्
न त्वदन्यो मघवन्नस्ति मर्डितेन्द्र ब्रवीति ते वचः ।।—(ऋग्.)१।८४।१९

पदार्थः—हे (**अङ्ग**) मित्र! (**शविष्ठ**) परम बलयुक्त! जिससे (**त्वम्**) तू (**देवः**) विद्वान् है, उससे (**मर्त्यम्**) मनुष्य को (**प्रशंसिषः**) प्रशंसित कर। हे (**मघवन्**) उत्तम धन के दातः! (**इन्द्र**) दुःखों के नाशक! जिससे (**त्वत्**) तझसे (**अन्यः**) भिन्न कोई भी (**मर्डिता**) सुखदायक (**नास्ति**) नहीं है, उससे (**ते**) तुझे (**वचः**) धर्मयुक्त वचनों का (**ब्रवीमि**) उपदेश करता हूँ।

भावार्थः— मनुष्यों को योग्य है कि असाधारण उत्तम कर्म करने असाधारण सदा सुख देने हारे, धार्मिक मनुष्य के साथ ही मित्रता करके एक-दूसरे को सुख देने का उपदेश किया करें।

साँप और भेड़िये सा न बन

माहिर्भूर्मा पृदाकुर्नमस्तऽ आतानानर्वा प्रेहि।
घृतस्य कुल्याऽउपऽऋतस्य पथ्याऽअनु ।।—(यजु.)६।१२

पदार्थः— हे (**आतान**) अच्छे प्रकार सुख का विस्तार करने वाले विद्वान्! तू (**मा**) मत (**अहिः**) सर्प के समान कुटिल मार्गगामी और (**मा**) मत (**पृदाकुः**) मूर्खजन के समान अभिमानी वा व्याघ्र के समान हिंसा करने वाला (**भूः**) हो। (**ते नमः**) सब जगह तेरे सुख के लिए अन्नादि पदार्थ पहले ही प्रवृत्त हो रहे हैं और (**अनर्वा**) अश्व आदि सवारी के बिना निराश्रय पुरुष जैसे (**घृतस्य**) जल की (**कुल्याः**) बड़ी धाराओं को प्राप्त हो, वैसे (**ऋतस्य**) सत्य के (**पथ्याः**) मार्गों को प्राप्त हो।

भावार्थः— किसी मनुष्य को कुटिलगामी सर्पादि दुष्ट जीवों के समान धर्ममार्ग में कुटिल न होना चाहिए, किन्तु सर्वदा सरलभाव से ही रहना चाहिए।

जो पक्षपात रहित, न्यायचरण सत्यभाषणादि युक्त ईश्वराज्ञा, वेदों से अविरुद्ध है
उस को '**धर्म**' और जो पक्षपातरहित अन्यायचरण मिथ्याभाषादि
ईश्वराज्ञाभङ्ग वेदविरुद्ध है उस को '**अधर्म**' मानता हूँ ।

मृत्यु से पूर्व शरण में जाओ

आ वो राजानमध्वरस्य रुद्रं होतारं सत्ययजं रोदस्योः।

अग्निं पुरा तनयित्नोरचित्ताद्धिरण्यरूपमवसे कृणुध्वम्।।६९।। –(ऋग्वेद)

पदार्थः– हे यथार्थवक्ता विद्वानों ! जैसे हम लोग (**वः**) आपके (**अध्यवरस्य**) न नष्ट होने योग्य राज्य के (**अवसे**) धर्मात्माओं की रक्षा और दुष्टों के नाश करने के लिये (**होतारम्**) देने वाले (**सत्ययजम्**) सत्य ही को प्राप्त होने और (**रुद्रम्**) दुष्टों के रूलाने वाले (**अचितात्**) जिसमें चित्त स्थिर नहीं होता, ऐसी वाले (**तनयित्नोः**) बिजुली के (**हिरण्यरूपम्**) तेजस्वरूप के समान रूप वाले व (**रोदस्योः**) अन्तरिक्ष और पृथिवि के मध्य में (**अग्निम्**) सूर्य के सदृश (**राजानम्**) प्रकाशमान् न्याय (**पूरा**) प्रथम करें, वैसा हम लोगों के बीच राजा आप लोग (**आ. कृणुध्वम्**) सब प्रकार करें ।

भावार्थः– इस मंत्र में वाचकलुप्तोपमालंकार है। हे विद्वान् लोगों ! राजा और प्रजाजनों के साथ एक सम्मति करके जैसे ईश्वर ने ब्रह्माण्ड के मध्य में सूर्य को स्थित करके सब का प्रिय सुखसाधन किया, वैसे ही हम लोगों के मध्य में उत्तम गुण, कर्म और स्वभाव युक्त को राजा करके हम लोगों के हित को आप लोग सिद्ध करो, जिससे आप लोगों का भी प्रिय सिद्ध होवे ।

अक्षय भण्डार

दुहे सायं दुहे प्रातर्दुहे मध्यन्दिनं परि।

दोहा ये अस्य संयन्ति तान् विद्मानुपदस्वतः।।–४।११।१२ (अथर्व.)

पदार्थः– प्रभु ने जो वेद रूपी धेनु (**गाय**) दी है, मैं उसका (**साय दुहे**) सायं दोहन करता हूँ, (**प्रातः दुहे**) प्रातः उसका दोहन करता हूँ, (**तध्यन्दिनं परिदुहे**) मध्या में उसका दोहन करता हूँ । प्रातः, सायं व मध्या में जब भी समय मिले, इस वेदधेनु का दोहन आवश्यक है । (**अस्य**) इस संसार संचालक प्रभु के (**ये**) जो (**दोहाः**) ज्ञान के प्रपूरण (**संयन्ति**) हमें सम्यक् प्राप्त होते हैं, (**तान्**) उन (**अनुपदस्वतः**) क्षय न होने देने वाले दोहों को हम जानते हैं । ये ज्ञान रूपी दुग्ध के दोह हमें विनाश से बचाते हैं ।

भावार्थः– हम प्रातः, सायं व मध्याह्न में समय मिलने पर सदा वेदधेनु का दोहन करें। इसके द्वारा प्राप्त ज्ञान दुग्ध हमें विनष्ट न होने देगा ।

चार पुरुषार्थ

चतुरश्चिद्, ददमानाद्, बिभीयादा निधातोः।
न दुरुक्ताय स्पृहयेत्।। ऋग्.१.४१.९
ऋषिः कण्वः घौर। देवता वरुणमित्रार्यमणः। छन्दः गायत्री।

- (**चतुरःचित्**) चारों ही [पुरुषार्थों] को (**ददमानात्**) धारण करनरेवाले से (**बिभीयात्**) डरे, (**आ, निधातोः**) जब तक वह इन्हें छोड़ न दे। (**दुरुक्ताय**) दुर्वचन की (**न स्पृहयेत्**) स्पृहा न करे।
- प्रायः देखा यह जाता है कि मनुष्य भयसंत्रस्त असत्पुरुषों से होता है कि वे कहीं हमें हानि न पहुँचा दें। अन्धकार में चोर से वह थर-थर काँपता है। आततायी को देख घर में जा दुबकता है। पर इस प्रकार के असाधुपुरुषों से तो उसे संघर्ष करना चाहिए, न कि उनसे डरना, और संघर्ष करके विजयी होना चाहिए। तो फिर मनुष्य किससे डरे? उससे जो कि धार्मिक है, जो धर्मपूर्वक धन कमाता है, जो धर्माविरुद्ध काम में प्रवृत्त होता है और जो जीवन्मुक्त है। धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष ये चार पुरुषार्थ मानव की उन्नति के चार सोपान हैं, जिनका मूल धर्म है। किसी ने धृति, क्षमा, दम, अस्तेय, शौच, इन्द्रियनिग्रह, धी, विद्या, सत्य, अक्रोध को धर्म कहा है; किसी ने जो धारण करे उसे धर्म कहा है; किसी ने जो स्वयं के लिए प्रिय हो वैसा ही व्यवहार दूसरों के प्रति करने को धर्म कहा है। धर्म के लक्षण अनेक हो सकते हैं, पर सबमें मूल भावना एक ही है कि वे ही कार्य धर्म कहाते हैं, जिनसे अन्यों का भी कल्याण हो और अपना भी। धर्म के समान धन भी उन्नति का साधन है, पर तभी तक, जब तक वह धर्मानुकूल उपायों से अर्जित किया गया हो; अन्यथा वह पतनोन्मुख करने वाला बन जाता है। 'काम' भी धर्म-विरुद्ध होने पर पतन का साधन बनता है, किन्तु धर्मानुकूल होने पर संकल्प-बल द्वारा बड़े-बड़े कार्यों का साधक होता है। जैसे निर्वात स्थान में दीपक की लौ निश्चल रहती है, वैसे ही जिसके इन्द्रियाँ, मन आदि निश्चल हो गये हैं और जिसने समाधि से अपने आत्मा को परमात्मा में केन्द्रित कर लिया है, वह जीवन्मुक्त कहाता है; शरीरान्त होने पर वह मोक्ष पा लेता है। इन धर्म-अर्थ-काम-मोक्षरूप चारों पुरुषार्थों को धारण करने वाले व्यक्ति से मनुष्य डरे कि ऐसे उच्च मनुष्यों के सम्मुख अशोभन कार्य करूँ तो मेरे लिए डूब मरने की बात है। पर इनसे भय का कारण तभी है, जब तक ये लोग चारों पुरुषार्थों का सेवन करते हैं; यदि ये पुरुषार्थों को त्याग देते हैं तो ये उस कोटि के व्यक्ति नहीं रहते कि कोई पाप करते हुए इनसे डरे। चारों पुरुषार्थों के धारक किसी महात्मा से मनुष्य किस रूप में डरे इसका एक उदाहरण देता हुआ मन्त्र कहता है कि वह दुर्वचन बोलने की कभी स्पृहा न करे, अपितु इनके सान्निध्य से प्रेरणा पाकर सदा सुवचन ही बोले।

हे मित्रता के आदर्श मित्र प्रभु! हे पापनिवारण के आदर्श वरुण प्रभ! हे न्याय के आदर्श अर्यमा प्रभु! तुम हमारे अन्दर ऐसी वृत्ति उत्पन्न करो कि हम चारों पुरुषार्थों के धारक व्यक्तियों से शिक्षा लेकर सदा उनसे अनुमोदित सदाचार में ही प्रवृत्त रहें। -(वेदमञ्जरी से)

थ्यासोफी से सम्बन्ध

१८७८ ई. के जनवरी मास में ऋषि दयानन्द को अमरीका से आया हुआ निम्नलिखित पत्र मिला:-

सेवा में परम सम्मानित पण्डित दयानन्द सरस्वती, भारतवर्ष,

सम्मानित गुरो!

आध्यात्मिक विद्या से प्रेम रखने वाले कुछ अमेरिकन तथा अन्य विद्यार्थी, अपने को आपके चरणों में रखते हैं और प्रकाश की याचना करते हैं। उन लोगों के साहसिक व्यवहार ने कुदरतन उनकी ओर सर्वसाधारण का ध्यान खींचा है और उन समाचार-पत्रों तथा व्यक्तियों की ओर से, जिनके दुनियावी हित या निजू संस्कार पहले से विद्यमान स्थिति के साथ बंधे हुए हैं, उनका विरोध किया गया है।

हमें नास्तिक, अविश्वासी और धर्महीन कहा गया। हम केवल युवक और जोशीले लोगों की ही सहायता नहीं चाहते, बुद्धिमान् और सम्मानित लोगों की सहायता भी चाहते हैं। इस कारण हम आपके चरणों में इस प्रकार आते हैं, जैसे कि पिता के चरणों में पुत्र आता है, और कहते हैं कि हमारे गुरु महाराज हमारी ओर दखिए, और बताइए कि हमें क्या करना चाहिए?

देखिए, कि हम आपकी सेवा मे अभिमान से नहीं अपितु नम्रता से आते हैं, और हम आपकी सलाह लेने और दिखाए हुए मार्ग पर चलकर कर्त्तव्य पालने के लिए उद्यत हैं।

(हस्ताक्षर) हैनरी अल्काट

प्रेसिडेण्ट, थ्यासोफिकल सोसाइटी

यह पत्र थ्यासोफिकल सोसाइटी के प्रधान की ओर से था। यह सोसाइटी १८७५ ई. के नवम्बर मास की १७ तारीख को अमरीका में स्थापित हुई थी। सोसाइटी की स्थापना मैडम ब्लैवेटस्की और कर्नल अल्काट के उद्योग से हुई थी। मैडम ब्लैवेटस्की रूस में एक जर्मन परिवार में उत्पन्न हुई थीं। १७ वर्ष की आयु में इनका एन.वी. ब्लैवेट्स्की के साथ विवाह हुआ। विवाह के तीन महीने पीछे मैडम ब्लैवेट्स्की ने पति को छोड़ दिया। अलग रह कर बरसों तक मैडम ने संदिग्ध जीवन व्यतीत किया और अपने पति के जीवित रहते ही मैटोविच नाम के एक पुरुष से सम्बन्ध स्थापित किया। बहुत समय तक अपना नाम बदलकर और उसकी विवाहिता स्त्री की भाँति बनकर मैडम ब्लैवेट्स्की मैटोविच के साथ रहीं। इसी सम्बन्ध से एक लड़का भी उत्पन्न हुआ, जिसके बारे में पीछे से मैडम ने बहुत सी आध्यात्मिक कल्पनाएं करके लोगों को समझाने का यत्न किया। मैटोविच का साथ छोड़ने पर मैडम बहुत समय तक मिस्र की राजधानी कैरा में रही। यहां पर मैडम को बहुत से जादूगरों और जोगियों से मिलने का अवसर मिला, जिनसे उन्हें चमत्कारों का रहस्य पता चला और स्वयं भी बहुत से हस्तलाघव करने लगी। १८७१ में मैडम मिस्र से अमरीका आ गई और आध्यात्मिक विद्या के विषय में लिख कर अपना निर्वाह करने लगी। मिस्र में सीखा

हुआ जादू यहां मैडम के बहुत काम आया। स्पिरिचुअलिज़्म पर लेख लिखकर वह अपना पेट पालन कर लेती थी।

१८७५ के अप्रैल मास में मैडम ने माइकेल थाटले नाम के आर्गीनियन के साथ विवाह कर लिया था। इस विवाह के समय मैडम ने दो झूठ बोले। उसका पहला पति जीवित था, तो भी उसने अपने को विधवा प्रसिद्ध करके दूसरे पुरुष से विवाह करा लिया। वह इस समय ४३ वर्ष की थीं परन्तु उसने अपने को ३६वर्ष का लिखाया। यह विवाह भी देर तक स्थिर न रह सका। शीघ्र ही दोनों में झगड़ा हो गया और तलाक ने सम्बन्ध का विच्छेद कर दिया।

रूस में बदनाम होकर मैडम ने अमरीका में आश्रय लिया और आध्यात्मिक विद्या पर लेख लिखकर अपना निर्वाह जारी रहखा। १८७४ में मैडम का कर्नल अल्काट से परिचय हुआ। कर्नल अल्काट पहले सिपाही था, परन्तु उस समय एक समाचार पत्र के संवाददाता के रूप में एक आध्यात्मिक घटना की छान-बीन में लगा हुआ था। दोनों आध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा से निर्वाह करने वाले चिटन्डन नगर में मिले, और मिलकर दोनों ने अनुभव किया कि हम एक-दूसरे के लिए आवश्यक हैं। दोनों ने मिलकर आध्यात्मिक ज्ञान की चर्चा को बढ़ाने का यत्न करने का निश्चय किया। दोनों पुस्तकें लिखते और उनकी आय से निर्वाह करते, परन्तु फिर भी अमरीकन लोग उनके दिए हुए ज्ञान को इतना मूल्यवान् नहीं समझते थे कि उन ग्रन्थों से दोनों का गुजारा भली प्रकार हो सके। १८ जुलाई, १८७५ का मैडम का एक पत्र है, जिसमें वह लिखती है:—

"Here, you see, is my trouble Tommorrow there will be nothing to eat. Something quite out of the way must be invented. It is doubtful if Olcott's "Miracle club" will help: I will fight to the last."

"मेरी कठिनाई यह है। कल खाने के लिए कुछ नहीं है। कोई बिल्कुल नया ढंग बनाना चाहिए। यह संदिग्ध है अल्काट की चमत्कार-सभा कुछ सहायता दे सकेगी। मैं आखिर तक लड़ूंगी।"

भोजन की भी दिक्कत थी। उस दिक्कत को दूर करने के लिए कर्नल अल्काट ने "मिरेकल क्लब" नाम से एक चमत्कार सिखाने की सभा बनाई थी, परन्तु उससे भी काफी आय नहीं हुई। कुछ पुस्तकें लिखी गईं, उनसे अन्नकष्ट दूर न हुआ। तब आखिर तंग आकर इस युगल ने थ्यासोफिकल सोसाइटी बनाने का निश्चय किया। १७ नवम्बर १८७५ को सोसाइटी की स्थापना हुई। कर्नल अल्काट प्रधान बने और मैडम ने मंत्री का कार्य संभाला। खजांची का कार्य एक लखपति को सौंपा गया, जिससे सोसाइटी के अधिकारियों की बहुत सी चिंताएं दूर हो गईं।

१८७७ में मैडम ब्लैवेट्स्की की प्रसिद्ध पुस्तक Isis Unveiled प्रकाशित हुई। पुस्तक अपने ढंग की अनूठी थी। उसमें प्राचीन धर्मों का समर्थन था, ईसाइयत पर बहुत से आक्षेप थे और जादू या चमत्कार की सम्भावना दिखाई गई थी। उस पुस्तक पर वैज्ञानिक और दार्शनिक लोगों ने अधिक्षेप भरी दृष्टि डाली

और ईसाई खीझ गए, परन्तु सर्वसाधारण को अनूठेपन ने बहुत खींचा। लोगों के उस पुस्तक-लेखिका की लेखन-शैली अद्‌भुत मालूम हुई। आशा हुई कि समय और श्रम की कीमत निकल आयेगी, परन्तु दैव को कुछ और ही अभीष्ट था। Isis के छपने के कुछ समय पीछे मि. कौलमन ने उसकी आलोचना की, जिसमें यह सिद्ध किया कि मैडम की पुस्तक में कुछ भी नवीनता नहीं है, सब कुछ लगभग सौ पुस्तकों से उद्धृत किया हुआ है। उन्हीं दिनों मि. होम की Light and Shadows of Spiritualism पुस्तक प्रकाशित हुई, जिसमें थ्यासोफी के लीडरों की पोल खोलने का यत्न किया गया। मि. कौलमेन की आलोचना और मि. होम के आक्रमणों ने थ्यासोफी के नेताओं की स्थिति असम्भव बना दी। ईसाई पहले ही खीझे हुए थे। Isis की पोल खुल जाने से थ्यासोफी के संस्थापक बड़ी विपदा में पड़े। अब तक कर्नल अल्काट और मैडम ब्लैवेट्स्की यदि कुछ थे तो Spiritualist थे- और कुछ नहीं थे। न वह हिन्दू थे, न बौद्ध थे। यदि आत्मा उनसे बाते करती थी तो किंग्स जान की। अमेरिका में उनकी स्थिति बहुत बिगड़ कई। उनके लिए उस देश में रहना असंभव हो गया। यह दशा १८७७ में हुई। मैडम ब्लैवेट्स्की ने उस समय एक पत्र लिखा, जिसका निम्नलिखित उद्धरण लेखिका की मानसिक दशा को चित्रित करके बताता है कि युगल को भारत की ओर प्रेरित करने का क्या कारण हुआ, और १८७८ में ऋषि दयानन्द को कर्नल अल्काट की जो चिट्ठी मिली, उसकी तह में क्या बात थी? पत्र में मैडम लिखती है-

"It is for this I am goung for ever to India, and for very shame and vexation. I want to where no one will know my name. Home's malignity ruiined me for ever in Europe."

''मैं इसलिए भारत को जा रही हूँ। लज्जा और खिझलाहट से तंग आकर मैं ऐसी जगह जाना चाहती हूँ, जहां मेरा नाम कोई न जानता हो। होम के द्वेष ने यूरोप में सदा के लिए मेरा नाश कर दिया।''

इस प्रकार अमरीका और यूरोप में बेइज्जत होकर थ्यासोफी क संस्थापकों ने भारत के भोले निवासियों का उद्धार करने का निश्चय किया। इतनी प्रस्तावना को पढ़कर पाठक समझ सकेंगे कि थ्यासोफी के नेताओं ने ऋषि दयानन्द को ऐसे नम्रता भरे पत्र क्यों लिखे? वे अमरीका योरोप में बिल्कुल बदनाम हो चुके थे, वहां उनका रहना असम्भव था। भारत में पैर जमाने का यही उपाय था कि किसी शक्तिशाली व्यक्ति का आसरा लिया जाये। श्रीयुत हरिश्चन्द्र चिन्तामणि से कर्नल अल्काट को ऋषि का परिचय मिला था। उस परिचय से लाभ उठाकर अल्काट ने ऋषि को अधीनता भरे पत्र लिखने आरम्भ किए।

इस परिच्छेद में प्रारम्भ में जो पत्र दिय़ा गया है, उसके पीछे थ्यासोफी की ओर से हरिश्चन्द्र चिन्तामणि द्वारा स्वामी जी के पास बराबर पत्र आते रहे। २१ मई १८७८ के पत्र में कर्नल अल्काट लिखते हैं:-

''जब मैं यह इशारा देता हूँ कि हमारी सोसाइटी पं. दयानन्द सरस्वती की और मेरी पथदर्शता में आर्यसमाज की शाखा विख्यात की जाये, तब मैं उस बुद्धिमान् और पवित्र मनुष्य को शिक्षक और

मार्गदर्शक मानने के कारण गर्व का अनुभव करता हूँ।" २२ मई सन् १८७८ के पत्र में थ्यासोफिकल सोसाइटी के रिकार्डिंग सैक्रेटरी अगस्ट गुस्टम लिखते हैं:-

"आर्यसमाज के मुखिया केनाम,

आपको आदरपूर्वक सूचना दी जाती है कि २२ मई १८७८ को न्यूयार्क में थ्यासोफिकल सोसाइटी की कौन्सिल का जो अधिवेशन प्रेसीडेण्ट की अध्यक्षता में हुआ था, उसमें वाइस प्रेसीडेण्ट ए. बिल्डर के प्रस्ताव और कारस्पांडिंग सेक्रेटरी एच.पी.ब्लैवेत्स्की के अनुमोदन पर सर्वसम्मति से यह निश्चय किया गया कि सोसाइटी मिल जाने के प्रस्ताव को स्वीकार करती है और यह भी स्वीकार करती है कि सोसाइटी का नाम "दी थ्यासोफिकल सोसाइटी ऑफ दी आर्यसमाज ऑफ इंडिया" रख दिया जाये।

निश्चय हुआ कि "थ्यासोफिकल सोसाइटी अपने और यूरोप तथा अमरीका में विद्यमान अपनी शाखाओं के लिए आर्यसमाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती को नियमानुसार पथप्रदर्शक या मुखिया अंगीकार करे।"

इस प्रकार थ्यासोफिकल सोसाइटी ने आर्यसमाज से उस समय सम्बन्ध स्थापित किया जिस समय अमरीका के निवासी सोसाइटी के संचालकों को यह पता नहीं था कि कल का भोजन कहां से मिलेगा। वहां से खूब बदनाम और तंग थे। ऊपर दिए हुए पत्रों से स्पष्ट होता है कि उस समय सोसाइटी के नेता स्वामी जी को गुरु मानने में अपना सौभाग्य समझते थे, और सब तरह से आर्यसमाज की संस्था में आने को तैयार थे। अन्त में, बहुत से पत्र व्यवहार के पीछे, थ्यासोफिकल-युगल १८७९ के जनवरी मास में बम्बई पहुंच गया और जिसे गुरु माना था, उसके चरणों में भेंट रखने की उत्सुकता प्रगट करने लगा।

क्रमशः

अपाहिज व बेसहारा गौधन की रक्षार्थ जोधपुर की प्राचीनतम महर्षि दयानन्द गौशाला,मण्डोर

—आर्यसमाज जोधपुर रातानाड़ा के अन्तर्गत

यह गौशाला जोधपुर की 104 वर्ष पुरानी गौशाला है इसमें गायों की देखभाल उचित ढंग से की जाती है आप भी अपना समय एवं दान देकर पुण्य के भागीदार बन सकते हैं। अतः आप द्वारा दिया गया दान 80जी के तहत छूट प्राप्त है। आप एवं अपने सहयोगियों से गौशाला में दान देकर 80जी की छूट प्राप्त कर लाभ प्राप्त कर पुण्य के भागीदार बन सकते हैं।

सचिव

U Co Bank A/c 05630110041192

मण्डोर ब्रांच IFSC UCBA0000563

दुर्गादास वैदिक

१३४ वां ऋषि स्मृति समारोह सम्पन्न

महर्षि दयानन्द सरस्वती के अंतिम कर्म स्थली जोधपुर स्थित महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती भवन में १३४ वां ऋषि स्मृति समारोह मिति आश्विन शुक्ल पक्ष अष्टमी से द्वादशी संवत् २०७४ अर्थात् गुरुवार, २८ सितंबर से सोमवार २ अक्टूबर २०१७ ईस्वी तक उत्साह पूर्वक मनाया गया। इस सम्मेलन में आए आर्य संन्यासियों में गुरुकुल आश्रम आमसेना के संस्थापक स्वामी धर्मानंद जी सरस्वती जी महाराज आर्ष गुरुकुल आबू पर्वत के संस्थापक स्वामी धर्मानन्द जी सरस्वती महाराज उत्तरकाशी उत्तराखंड से स्वामी वेदानंद जी सवस्वती महाराज दिल्ली से स्वामी शिवानन्द जी सरस्वती महाराज भीनमाल से प्रसिद्ध वेज्ञानिक संन्यासी स्वामी अग्निव्रत जी नैष्ठिक , सीकर सांसद स्वामी सुमेधानंद जी सरस्वती , स्वामी सुखानंद जी महाराज, अधिष्ठाता, गुरुकुल फतूही प्रमुख आर्य विद्वानों में आचार्य सत्यानंद जी वेदवागीश , डॉ. वेदपाल जी मेरठ , आचार्य कमलेशकुमार जी चौकसी अहमदाबाद, आचार्य अन्नपूर्णा जी, द्रौणस्थली आर्ष कन्यागुरुकुल महाविद्यालय देहरादून, आचार्य सत्यजीत जी अजमेर, आचार्य सोमदेव जी अजमेर, योगाचार्य चन्द्रेश जी गांधीधाम तथा प्रमुख आर्य नेताओं में श्रीमान सुरेशचन्द्र जी आर्य प्रधान, सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा, श्रीमान ठाकुर विक्रम सिंह जी दानवीर आर्यश्रेष्ठी व अध्यक्ष राष्ट्रीय निर्माण पार्टी उत्तर प्रदेश, आर्य प्रतिनिधि सभा छत्तीसगढ़ से आचार्य अंशुदेवजी इत्यादि महानुभावों ने आर्य जनता को संबोधित किया। श्री चन्द्रप्रकाश जी देवड़ा दानवीर आर्यश्रेष्ठी जयपुर प्रतिबद्धता के बाद भी समयाभाव के कारण उपस्थित नहीं हो सके। इस कार्यक्रमों में भारत भर से आए आर्य श्रद्धालुओं ने धर्म लाभ कमाया। कार्यक्रम में प्रतिनिधि प्रातः पाँच से साढ़े पाँच बजे तक आचार्य चन्द्रेश जी ने साधकों को ध्यान योग का अभ्यास कराया।

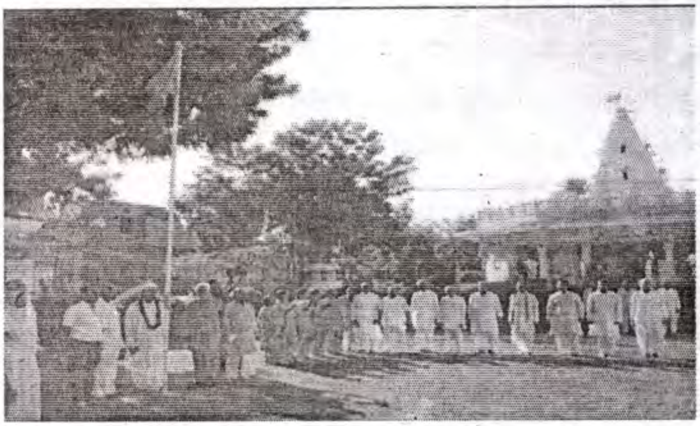

आर्य जगत् के यशस्वी विद्वान् आचार्य सत्यानंद जी वेदवागीश के ब्रह्मत्व में तथा द्रोणस्थली आर्ष कन्या गुरुकुल महाविद्यालय की आचार्या अन्नपूर्णा जी की तथा उनकी ब्रह्मचारिणी शिष्याओं के

सुमधुर वेदपाठ के बीच प्रातः ऋग्वेद यज्ञ तथा सांय दैनिक यज्ञ का तथा संध्या प्रतिनि आयोजित किए गए। महर्षि दयानन्द सरस्वती योगसाधना-सत्संग भवन मे अपने सात्विक दान से सहयोग करने वाले आर्य श्रेष्ठियों को यजमान बनाया गया। यज्ञ में आचार्य सत्यानंदजी वेदवागीश मंत्रों की व्याख्या भी करते रहे।

प्रथम दिवस के ऋग्वेद यज्ञ के उपरान्त आचार्य सत्यानंद जी वेदवागीश, स्वामी धर्मानन्द जी महाराज व आ.प्र.सभा, राजस्थान के प्रधान विजयसिंह भाटी द्वारा ध्वजारोहण के साथ कार्यक्रम का विधिवत् आरंभ हुआ। इस अवसर पर महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास द्वारा नवनिर्मित महर्षि दयानन्द सरस्वती योगसाधना सत्संग भवन का लोकार्पण किया गया, जिस पर कार्यक्रम के प्रथम दिवस सौ फीट ऊँचा ओ३म् ध्वज फहराया गया। सभी आगंतुकों के लिए आवास एवं भोजन की समुचित व्यवस्था न्यास की ओर से निःशुल्क की गई थी। कार्यक्रमों मे विद्वानों, संन्यासियों, अतिथियों तथा महर्षि दयानन्द सरस्वती योगसाधना सत्संग भवन में अपने सात्विक दान से सहयोग करने वाले आर्य श्रेष्ठियों का अभिनन्दन, स्मृति भवन न्यास के कर्मठ कार्यकर्ताओं व सहयोगियों का सम्मान तथा सेवकों का उत्साहवर्द्धन किया गया। न्यास के मंत्री आर्य किशनलाल गहलोत द्वारा तन-मन-धन से पूर्ण समर्पित होकर की गई सेवाओं के लिए न्यास और जोधपुर की आर्यसमाजों की ओर से उन्हें अभिनन्दन पत्र भेंट किया गया। अभिनन्दन पत्र का मंच से वाचन डॉ. रामनारायण जी शास्त्री ने किया। कार्यक्रम के अंतिम दिन आधुनिक उपकरणों युक्त व्यायामशाला का शिलान्यास महात्मा श्री नारायणस्वामी अतिथिशाला के ऊपर किया गया। पाँच दिवसीय इस कार्यक्रम में कुल ग्यारह सम्मेलन आयोजित किए गए, जिनका विवरण आप अगले पृष्ठों पर पढ़ेंगे।

महर्षि दयानंद सरस्वती योग साधना सत्संग भवन का लोकार्पण

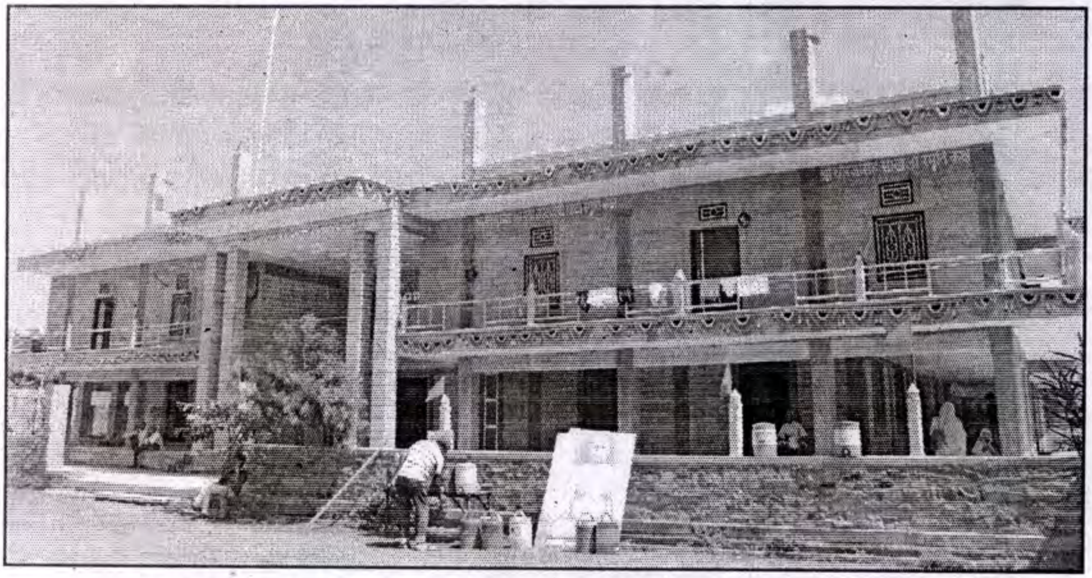

नवनिर्मित महर्षि दयानंद सरस्वती योग साधना सत्संग भवन

नवनिर्मित महर्षि दयानंद सरस्वती योग साधना सत्संग भवन में द्वारों से प्रवेश

महर्षि दयानंद सरस्वती की अंतिम कर्मस्थली जोधपुर के महर्षि दयानंद सरस्वती स्मृति भवन में आयोजित १३४ वें ऋषि स्मृति सम्मेलन के प्रथम दिन नवनिर्मित महर्षि दयानंद सरस्वती योग साधना सत्संग भवन का लोकार्पण किया। शाला संस्कार से पूर्व भवन में प्रवेश करते हुऐ पूर्व गुरूकुल आमसेना उड़ीसा के संस्थापक पूजनीय स्वामी धर्मानंद जी जी महाराज एवं सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के यशस्वी प्रधान श्री सुरेश

चंद्र जी आर्य के सानिध्य में श्री नरपत सिंह जी तथा श्री तेजप्रकाश जी ने सपत्नीक नवनिर्मित भवन के दक्षिणी द्वार पर अग्न्याधान किया और आर्य प्रतिनिधि सभा, राजस्थान के प्रधान श्री विजय सिंह जी भाटी एवं न्यास के मंत्रीजी के सुपुत्र आर्य श्री महेन्द्र गहलोत ने सपत्नीक नवनिर्मित भवन के पश्चिमी द्वार पर अग्न्याधान किया। प्रवेश करके आर्य प्रतिनिधि सभा, राजस्थान के प्रधान श्री विजय सिंह जी भाटी, न्यास के मंत्री श्री आर्य किशनलाल जी गहलोत, न्यासी व नगर आर्यसमाज गुलाबसागर, जोधपुर के प्रधान श्री रामेश्वर जी जसमतिया ने सपत्नीक अन्य यजमानों के साथ डॉ0 रामनारायण जी शास्त्री के पौरोहित्य में शाला संस्कार सम्पादित किया। संस्कार के समय सभी भामाशाह परिवार उपस्थित थे, जिन्होनें स्वनिर्मित कक्षों में दीप प्रज्ज्वलित किए।

<u>नवनिर्मित महर्षि दयानंद सरस्वती योग साधना सत्संग भवन में शाला संस्कार</u>

नवनिर्मित भवन को संगठन सूक्त सहित वेदमंत्रों से सज्जित किया गया है। साथ ही इसकी दीवारों पर सजीव व निर्जीव सृष्टिरचना, त्रैतवाद आदि गहन विषयों पर आर्य श्री दुर्गादास "वैदिक" द्वारा संकलित एवं प्रस्तुत वैदिक विचारधारा के कम्प्यूटरीकृत पट्टलेख बनवाकर दीवारों पर लगाए गए हैं। इस भवन का मंच आर्य श्री किशनलाल गहलोत ने अपने माता पिता की स्मृति में निर्मित कराया है। प्रथम माले पर बने बीस कक्षों को शय्याओं सहित आधुनिक सुविधाओं से सज्जित किया गया है। इसके मंच पर प्रोजेक्टर स्कीन लगाई जाएगी ताकि ऋषि मिशन को समर्पित दृष्य श्रव्य माध्यम की सामग्री का भी सदुपयोग हो सके।

आसमान छू रहा है ओ३म् ध्वज

जोधपुर के महर्षि दयानंद सरस्वती स्मृति भवन में १३४ वें ऋषि स्मृति सम्मेलन के प्रथम दिन श्री माधोसिंह, सूरसागर द्वारा समर्पित १०० फुट ऊंचाई पर ओ३म् ध्वजा फहराई गई। सीकर से सांसद स्वामी सुमेधानन्द जी महाराज एवं सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्रीमान् सुरेशचन्द्र जी आर्य द्वारा 100 फीट ऊँचाई पर ओ३म् ध्वज फहराया गया। ३0 फीट ऊँची छत पर ७0 फीट ऊँचे धातु के ध्वजतम्भ की लागत तीन लाख रुपये से भी अधिक आई है। इसे सूरसागर, जोधपुर निवासी श्री माधोसिंह देवड़ा ने बनवाकर न्यास को समर्पित किया। इस ध्वज स्तम्भ पर स्वर्ण मण्डित कलश भी लगाया गया है। यह ध्वजा दूर दूर से महर्षि दयानंद सरस्वती स्मृति भवन को इंगित करेगी।

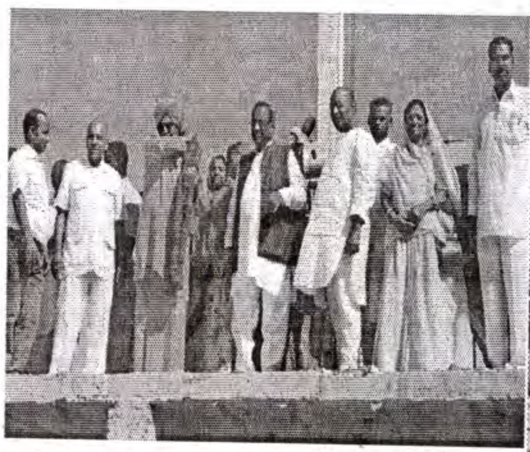

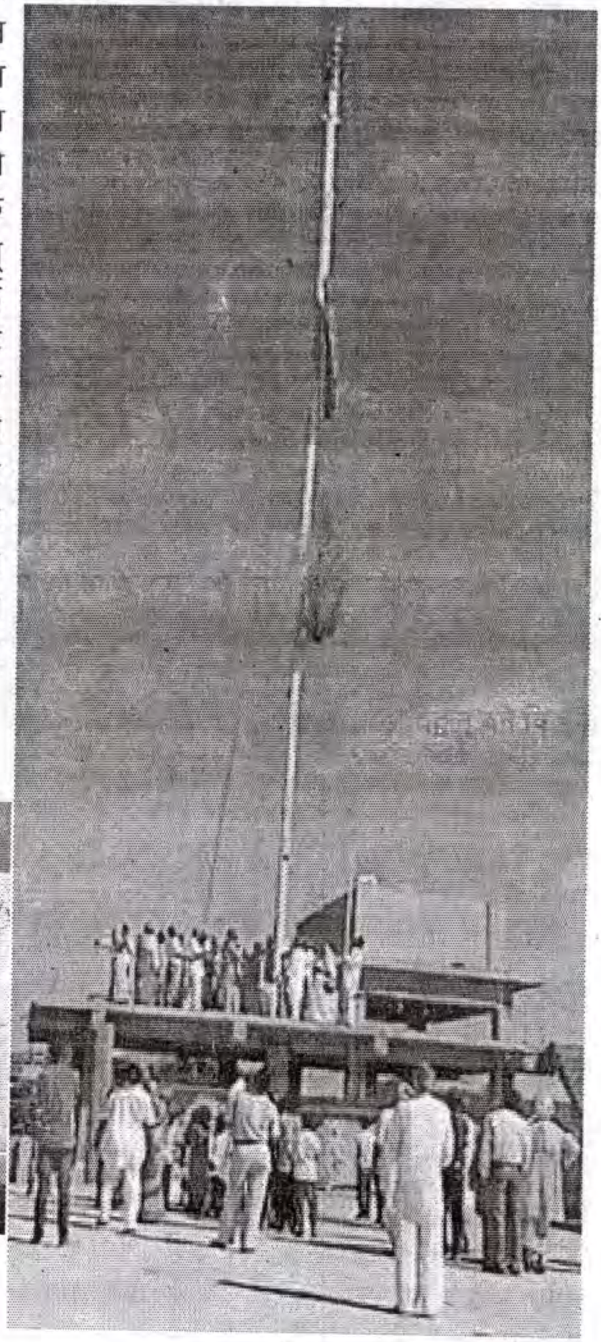

पुरुषार्थ को प्रोत्साहन

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर के मंत्री आर्य श्री किशनलाल गहलोत कभी थकते दिखायी ही नहीं देते। जब से न्यास का मंत्रीपद सम्हाला है, महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन की कायापलट ही हो गई है। किसी भी प्रकल्प का प्रस्ताव आते ही अविश्वसनीय विश्वास के भरकर उसे पूरा करने में लग जाते हैं। पूर्ति में जो भी संसाधन चाहिए, उसको ध्यान मे रखकर यथायोग्य व्यक्तियों को साथ लेकर प्रकल्प की पूर्ति तक रूकते ही नहीं है। कई प्रकल्प एक साथ हो तो भी चिंता नहीं करते। इनके अथक पुरुषार्थ को प्रोत्साहित करने हेतु कार्यक्रम के दौरान् हुई महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर की साधारण सभा में न्यास की वर्तमान कार्यकारिणी के कार्यों की प्रशंसा करते हुए, श्रीमती परोपकारिणी सभा, अजमेर के मंत्री ओममुनि जी के प्रस्ताव पर सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के प्रधान श्री सुरेश चन्द्र जी आर्य द्वारा न्यास के कार्यकर्ता प्रधान श्री विजय सिंह भाटी तथा मंत्री श्री आर्य किशनलाल गहलोत का माल्यार्पण और शॉल ओढ़ाकर उत्साहवर्द्धन किया गया।

ओ३म्

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, जोधपुर

अभिनन्दन पत्र

महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के सभी न्यासीगण

साथ ही कार्यक्रम के अंतिम दिन न्यास के मंत्री गहलोत श्री किशनलाल आर्य के द्वारा आर्यसमाज की सेवा, जन सेवा, निःस्वार्थ समर्पण, पुरुषार्थ परोपकार और ऋषि–भक्ति को हृदय तल से सराहते हुए महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के न्यासी व जोधपुर की समस्त आर्यसमाजों के सदस्यों ने आपको अभिनन्दन पत्र भेंट किय साथ ही उनका व उनके परिवार का अभिनन्दन किया।

प्रथम सम्मेलन :

विषय: ऋषि प्रतिपादित आर्ष पद्धति का महत्व

श्री कैलाश कर्मठ के ईश्वर भक्ति के भजनों के बाद सम्मेलन को संबोधित करते हुए सीकर से सांसद स्वामी सुमेधानंद जी सरस्वती ने न्यास के प्रयासों की सराहना करते हुए महर्षि की विचारधारा को प्रचारित-प्रसारित करने की आवश्यकता बताई और इसकी जिम्मेदारी ऋषि द्वारा आर्यसमाज को दिए जाने को रेखांकित किया। स्थितियों की तुलना करते हुए स्वामी जी ने कहा कि महर्षि दयानन्द मत-मतान्तर जनित वैमनस्य और कटुता से चितिंत था। किंतु आज तो हालात बदतर है। सांप्रदायिक मनुष्य आतंकवाद तक जा पहुँचा है। दुनिया का चौधरी एक राष्ट्र, जो सर्वाधिक शक्ति संपन्न है, साम्यवाद के साथ साथ वेद का भी विरोधी है। उन्होंने कहा कि जनता भीड़ा जमा करने वालों के साथ जल्दी चली जाती है। विवेकवान लोग ही समझ कर आर्य समाज का दामन थामत है। स्वामीजी ने याद दिलाया कि वर्ष २०२४ में महर्षि के जन्म द्विशताब्दी एवं २०२६ में स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान शताब्दी आ रही है । आर्यो को इनके लिए तैयारी अभी से आरंभ कर देनी चाहिए । महर्षि के मिशन को आगे बढ़ाने के लिए महर्षि के जन्म की द्विशताब्दी तक दो सौ जीवनदानी आगे आएं । स्वामी श्रद्धानन्द बलिदान शताब्दी को ऐतिहासिक बनाने हेतु शुद्धि यज्ञ चलाएं। ऋषि मिशन में दीवानगी का श्री सुदर्शन देव जी का उदाहरण देते हुए स्वामी जी ने कहा कि यह अनपढ़ थे, किन्तु गुरुकुल में गाय चराने से अपना अभ्यास शुरू किया और इतने बड़े विद्वान् बने कि उन्हें सत्यार्थप्रकाश कंठस्थ हो गया था । स्वामी जी ने कहा कि आर्य समाजी सांसदों के अतिरिक्त आर्यसमाजी पृष्ठभूमि के लगभग 50 सांसद वर्तमान संसद में है। हमारा जुड़ाव सबसे रहना चाहिए।

मेरठ से पधारे डॉ.वेदपाल जी ने अपने विद्वत्तापूर्ण व्याख्यान में बताया कि ऋषियों द्वारा प्रतिपादित बात आर्ष होती है। साधारण व्यक्ति चर्म चक्षु से सिर्फ प्रत्यक्ष हो रही बात को देखते हैं। किंतु ऋषि हाते हैं जो अन्तर्चक्षु से देखते हैं। वह अतीत, वर्तमान और अनागत को भी देखते हैं। जो भी आर्ष पद्धतियां महर्षि दयानन्द ने हमें दी, उनमें से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण शिक्षण पद्धति है। शिक्षा से व्यक्ति को विद्या की उपलब्धि होती है। पदार्थ के यथार्थ स्वरूप को बताने वाली प्रक्रिया ज्ञान या विद्या कहलाती है। विद्या प्राप्ति की प्रथम आवश्यकता शब्दबोध है, जो इस सृष्टि के समस्त प्राणियों में सिर्फ मनुष्य के लिए उपलब्ध है। तैतरीय उपनिषद् की शिक्षा वल्ली के पांच अधिकरणों को परिचय देते हुए कहा कि आज सिर्फ अधिलोक की शिक्षा को ही वर्तमान पा रहा है। पाँच में से शेष चार अधिकरणों को छोड़ दिया, जो अधिज्यौतिष से अध्यात्म तक जाते हैं। महर्षि दयानन्द शिक्षा को कितना महत्त्व देते थे इस बात का पता इस उदाहरण से चलता है कि फर्रुखाबाद में

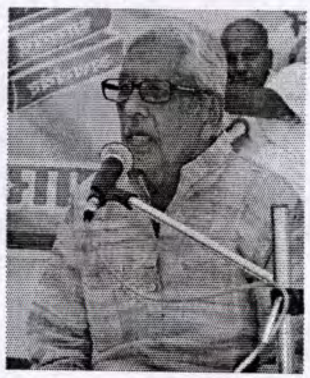

महर्षि ने अपने द्वारा स्थापित प्रथम पाठशाला के अध्यापक का वेतन तत्समय चालीस रूपया रखा था जो आज लगभग दो लाख रूपए होता है। वाराणसी में स्वामीजी महाराज ने श्री गणेश श्रोत्रिय को शिक्षक नियुक्त किया था और शिक्षा अर्जित करने के लिए महर्षि विज्ञापन देते थे। उन्होंने कहा कि अनार्ष ग्रंथों का अध्ययन रूकना चाहिए। गुरुकुल कांगड़ी के संस्थापक स्वामी श्रद्धानंद जी महाराज एवं बनारस हिंदू विश्वविद्यालय के संस्थापक महामना मदन मोहन जी मालवीय के संवाद उन्होंने याद दिलाया जिसमें स्वामी जी ने बनारस हिंदू विश्वविद्यालय में अंग्रेजी की शिक्षा पर महामना से कहा था कि गंगा के किनारे टम्स का पानी पिलाना उचित नहीं है। आचार्य जी ने कहा कि हमारी व्यवस्था की कमी है कि समझदार लोग और समाज के उच्च श्रेणी के लोग अपने प्रतिभावान विद्यार्थियों को संस्कृत विद्यालय एवं गुरुकुलों में नही भेजते। जा निम्न या मध्यम श्रेणी के बच्चे आते हैं, उनके बचने की व्यवस्था भी गुरुकुलों में नहीं भेजते। जा निम्न या मध्यम श्रेणी के बच्चे आते हैं, उनके पढ़ने की व्यवस्था भी गुरुकुलों में बड़ी मुश्किल से हाती है। संस्कृत के समृद्धि के बिना शिक्षा की समृद्धि नहीं हो सकती एवं शिक्षा की समृद्धि के बिना मानव जाति का भला होना संभव नहीं है। अतः हम प्रयास करें कि हम अपने बच्चों को संस्कृत में शिक्षित करें या गुरुकुलों के विद्यार्थियों को भी भर के सहायता प्रदान करें।

वेदों के प्रकांड विद्वान सत्यानंद जी वेदवागीश के द्वारा बहुत से उदाहरणों के साथ यह बताया कि अष्टाध्यायी के विद्वान सर्वकलापारंगत होते हैं। उन्होंने बहुत से ऐसे उदाहरण दिए जिससे आर्षपद्धति की शिक्षा की महत्ता प्रतिपादित होती है। स्वामी विरजानंद जी महाराज के जीवन काल की भी घटना बताई, कि किस तरह उन्होंने प्रज्ञाचक्षु होते हुए भी शतरंज के प्रसिद्ध खिलाड़ी को शतरंज में हराया। उड़िया का उदाहरण देते हुए आचार्य जी ने बताया कि वन का तात्पर्य जंगल भी होता है, पानी भी होता है और किरण भी। यदि कोई शिक्षा ही नहीं ले पाया है, तो वह प्रकरण के अनुरूप इस शब्द का अर्थ भी गलत करेगा, प्रकरण उसको समझ में ही नहीं आएगा। पंड़ितों के स्तरों को बताते हुए आचार्य जी ने गेहे पंड़ित, बहि पंडित, सभा पंडित और पंडित पंडित की व्याख्या की।

अपने अध्यक्षीय उद्‌बोधन में द्रोणस्थली आर्ष कन्या गुरुकुल महाविद्यालय, देहरादून से पधारी आचार्या अन्नपूर्णा जी ने कहा कि शिक्षा मानदंड होती है और मानव और समाज के विकास की। शिक्षा से अज्ञान का नाश होता है, आत्मज्ञान होता है और यह केवल आर्ष पद्धति की शिक्षा प्रणाली से हो सकता है। पहली शिक्षा दाता माता होती है, अतः माता का विद्वान् होना परम आवश्यक है, अर्थात् स्त्री शिक्षा अपरिहार्य है। आचार्या जी ने वर्णोच्चार में ह्रस्व, दीर्घ व प्लुत उच्चारणों का आरंभिक परिचय देते हुए कहा कि शिक्षा के अभाव से दुनिया का नाश होता है। आचार्या जी ने एक दुखद व्यवस्था की तरफ भी ध्यान आकर्षित किया कि गुरुकुलों में आर्षपद्धति से पढ़े विद्यार्थियों को सरकारी व्यवस्था की परीक्षाएँ पास करने के लिए अनार्ष ग्रंथ पढ़ने पड़ते हैं। वास्तव में यह इस देश का दुर्भाग्य है। इस सत्र का संचालन माननीय डॉक्टर रामनारायण जी शास्त्री ने किया। वैदिक एवं आधुनिक भौतिक विज्ञान शोध संस्थान, भीनमाल के स्मामी अनिव्रत जी नैष्ठिक पूरे सत्र में मंच पर विराजमान थे।

द्वितीय सम्मेलन :

विषय: प्रभु भक्ति से जीवन का उत्थान

पाँच दिवसीय सम्मेलन के प्रथम दिन सांयकालीन सत्र में री कैलाश जी कर्मठ ने अपने भजनों से सम्मेलन का आरंभ किया। पश्चात सम्मेलन के प्रथम वक्ता के रूप में संबोधित करते हुए श्रद्धय आचार्य सत्यजित् जी ने कहा कि महर्षि की जीवन यात्रा सच्चे शिव की खोज से आरंभ हुई और महर्षि शेष जीवन में जो कुछ भी करते रहे, इसी के संदर्भ या पृष्ठभूमि में करते रहे।

हम सामान्य जीवन मे देखते हैं कि कुछ लोग साकार की उपासना करते है, फिर भी वे सज्जन होते हैं, ध्यान ज्ञान से रहित नहीं होते, सुखी रहते हैं। कुछ लोग निराकार की उपासना करते हैं, वे भी सज्जन होते हैं, ध्यान ज्ञान से रहित नहीं होते, सुखी रहते हे। फिर साकार और निराकार की उपासना से जीवन में अंतर क्या आता है? जनसामान्य भी कहता है– क्या फर्क पड़ता है साकार और निराकार से? साकार की उपासना करने वाले कहते हैं श्रद्धा और भक्ति हमारी भी है हानि क्या है? महर्षि ने समस्त बुराइयों की जड़ साकार उपासना को पाया, क्योंकि साकार उपासना से परमात्मा का सर्वत्र साथ घटित नहीं होता। अत: व्यक्ति जब तक साकार उपास्य के सामने होता है, तब तक शायद पाप से भयभीत हो जाए। साकार जब सामने नहीं होता, तो उसके लिए पाप से भयभीत होने का कोई कारण नहीं हैं। निराकार की उपासना के मामले में इसके विपरित घटित होता है। अर्थात् निराकार का उपासक परमात्मा को सर्वव्यापक मानता है, सर्वव्यापक मानता है, इसलिए वह पाप की और प्रवृत्ति ही नहीं होता। परमात्मा की स्तुति से प्रीति होती है और उसी की आज्ञा पालन करने में तत्पर रहना भक्ति कहलाती है। किंतु अंदर की तत्परता के अभाव में असली भक्ति नहीं होती। अत: हम अंदर की तत्परता से अर्थात् मन से भक्ति करते हुए उसकी स्तुति करें। इससे उसमें प्रीति बढ़ेगी और परमात्मा के गुणों की प्राप्ति होगी; जिससे जीवन में उत्थान ही उत्थान होगा।

स्वामी शिवानंद जी महाराज ने स्मेलन में महात्मा विदुर को उद्धृत करते हुए बताया कि या तो व्यक्ति वैराग्य को प्राप्त कर ईश भक्ति करें और ईश भक्ति मे रूचि न रखने वाले देश के लिए बलिदान हो जाए। चाहे धर्म पर बलिदान का मार्ग हो चाहे राष्ट्रहित बलिदान मार्ग, आर्य समाज से बढ़कर कोई प्रेरणा नहीं दे सकता। अत: मानव जीवन की सार्थकता के लिए आर्य समाज में आना ही होगा, अन्यथा बाबाओं के

द्वारा ठगे जाते रहेंगे। स्वामी जी ने कहा जो सच्चे शिव की उपासना करते हैं, वे मुक्ति को प्राप्त करते है, अर्थात् उनके मार्ग पर चलते हैं सांसारिक सुख और राज्य भोगते हैं। किन्तु जो पौराणिक पार्थिव शिव की पूजा करते हैं, वे नरक मे जाते हैं। अशांति के वातावरण में ईश्वर की उपासना बाधित होती है और शांति स्थापित करने के लिए छत्रपति शिवाजी के मार्ग का अनुसरण आवश्यक हो गया है। स्वामी जी ने कहा कि पुराणों को पढ़कर और देश के पाखण्डी साधु-संतों को देख विदेशी सोचते है। कि जिस देश के भगवान और साधु चरित्रहीन है, उसके नागरिक कैसे होंगे ? साईं बाबा जैसे पाखंडी और विदेशी यह समझते रहे है कि हिंदू से बड़ी बेवकूफ कौम और कोई नहीं जो अपना नाश करने वालों की पूजा करती है।

सम्मेलन को संबोधित करते हुए आचार्य सोमदेव जी ने कहा कि कमजोरी समाज में होना सामान्य है। पाखंडी लोग कमजोरी का लाभ उठाकर कमजोरों का नुकसान करते हैं, किंतु ऋषि कमजोरी को दूर करने का उपाय करते है। इस लोक मे देखने मे आता है कि बंधन में दुख है। किंतु बहुत से बंधन स्वैच्छिक बंधन होते है, जिनमें दुख नहीं है। कई बात बंधन में बंधने के बाद ही बड़े बंधन से मुक्ति पाई जाती है। जैसे वेद के बंधनों में धर्म के बंधनों में, परमात्मा के नियमों में बंध जाओ, जिससे विषय-भोगों के बंधनो का तोड़ने की सार्म्थय प्राप्त हाती है। थोड़ा सा विषय सुख भोगने के भाव को मन से हटाओ, उसकी जगह थोड़ी सी संध्या, ध्यान, ईश्वर उपासना का अभ्यास करें।

सत्र के अध्यक्ष के रूप में बोलते हुए डॉक्टर वेदपाल जी ने कहा कि मानव जीवन में 2 स्तर होते हैं एक विषयाश्रित स्तर और एक अंत: जीवन। 400 वर्ष के भक्तिकाल में पैदा हुई भक्ति जीवन के इन दोनों ही स्तरों को उदात्त बनाने में असमर्थ है। महर्षि दयानन्द द्वारा प्रतिपादित भक्ति, भक्तिकाल की भक्ति से भिन्न है। वह अकर्मण्य भक्ति नहीं है। महर्षि भक्ति में उपासना भी है और ईश्वर की आज्ञा का पालन भी। किंतु ऋषि की उपासना अकर्मण्य की उपासना नहीं हैं उदाहरण देते हुए कहा- मान लो आप को नदी पार करनी है, तो भक्तिकाल की भक्ति तो संभव है कह दे- उपास्य की कृपा से पंगु गिरि लांघता है, नदी भी पार हो पाएगी। किंतु महर्षि की भक्ति परम पुरूषार्थ की ओर ले जाती हे, जो कहती है- चाहे तो तैरना सीख अथवा नाव आदि साधन उपलबध कर उसका सहारा ले पार हो जा। अन्यथा कुछ भी कर ले, पार नहीं हो पाएगा। महर्षि की भक्ति के दो पक्षों में से प्रार्थना उपासना जीवन के विषयाश्रित स्तर को उदात्त बनाती है। महर्षि की भक्ति का दूसरा अंग अर्थात् ईश्वर आज्ञा का पालन अंत: जीवन को उदात्त बनाता है, जिससे मनुष्य का सर्वांगीण उत्थान होता है। इस सत्र का संचालन आर्य समाज महर्षि पाणिनि नगर मंगला पूंजरा के कोषाध्यक्ष श्री शिवराम आर्य ने किया।

तृतीय सम्मेलन :

विषय: संध्या उपासना का प्रकार और उससे उपलब्धि

नगर आर्य समाज गुलाब सागर जोधपुर के कोषाध्यक्ष श्री यशपाल आर्य द्वारा संचालित इस सम्मेलन का आरंभ श्री कैलाश कर्मठ के प्रेरक भजनों से हुआ। इसके पश्चात् गुरुकुल आश्रम आमसेना के प्रबंधक आचार्य मनुदेव जी ने भी ऋषि के प्रति कृतज्ञता प्रकाशित करने वाला एक भजन प्रस्तुत किया। द्रोणस्थली आर्ष कन्या गुरुकुल महाविद्यालय देहरादून की ब्रह्मचारिणियों ने "प्रभुजी तेरी शरण में आए, दाताजी तेरी शरण आए" शीर्षक बड़ा सुंदर भजन प्रस्तुत किया।

सम्मेलन में प्रथम वक्ता के रूप में बोलते हुए डॉक्टर राम नारायण जी शास्त्री ने विषय प्रवर्तन करते हुए बेताया कि महर्षि के पूर्व की संध्या पद्धतियों में अथर्ववेद का कोई मंत्र नहीं था। क्योंकि अथर्ववेद को जादू टोने की किताब माना जाता था। यह तथ्य उन संध्याओं के प्रवर्तनकर्ताओं की मानसिक और विद्या की स्थिति को दर्शाता है। उन्होंने कहा कि संध्या नित्य नैमित्तिक कृत्य के ना करने से यदि लाभ नहीं होता है तो कोई फर्क नहीं पड़ता, किंतु यदि उसी कृत्य को ना करने से हानि होती है तो उसका असर पड़ता है। संध्या उपासना ना करने से हानि होती है, अत: अवश्य करना चाहिए, लाभ ही लाभ होगा।

द्रोणस्थली आर्य कन्या गुरुकुल विश्वविद्यालय देहरादून से पधारी आचार्या अन्नापूर्णा जी ने अपने संबोधन में संध्या के मंत्रों की व्याख्या की और उनकी उपयोगिता बताई। पश्चात् उपनिषदों व संस्कृत ग्रंथों के उद्धरण देते हुए उन्होंने कहा:—

तिलेषु तैलं दधनीव सर्पिराप: स्रोत: स्वरणीषु चाग्नि:।
एवमात्माऽत्मनि गृह्यतेऽसौ सत्येनैनं तपसा योऽनुपश्यति।।
(श्वेताश्वरोपनिषद्,अध्याय १, मंत्र१५)

अर्थात् जिस प्रकार तिलों के (तिल के दानों) में अदृश्य यप से तेल मौजूद रहता है, दही में घी, ऊपरी तौर पर सूखे नजर आ रहे जल-स्रोतों के भीतर पानी, और अरणियों में अग्नि की विद्यमानता रहती है, उसी प्रकार देही के अंदर यानी भौतिक काया के भीतर आत्मा का निवास रहता हैं जो व्यक्ति सत्य तथा तप के माध्यम से उसे देखने या पहचानने का प्रयत्न करता है उसी को उसकी प्राप्ति होती है, इस तथ्य का साक्षात्कार हो पाता है।

पुष्पे गुन्धं तिले तैलं काष्ठेऽग्निं पयसि घृतम्।

इक्षौ गुडं तथा देहे पश्याऽऽत्मानं विवेकतः।। (चाणक्यनीति)

अर्थात् जैसे फूल में गन्ध होती है, तिलों में तेल, काष्ठ में अग्नि, दूध में घृत और ईख में गुड़ होता है, वसे इस शरीर में आत्मा है। उसको विवेक से देख! परमात्मा अपने भीतर है; जो आत्मा से ही प्राप्त करने योग्य है।

यजुर्वेद और ईशोपनिषद् के मंत्र

स पर्यगाच्छुक्रमकायमव्रणमस्नाविरं शुद्धमपापविद्धम।

कविर्मनोष परिभूः स्वयंभूर्याथातथ्यतोऽर्थान व्यदधाच्छाश्वतीभ्यः समाभ्यः।।८।। का उदाहरण देते हुए और परमात्मा के गुणों की व्याख्या करके उन्हें इंद्रियातीत बताते हुए आत्मा से ही प्राप्त कर सकने की बात बताई। आचार्या जी ने संध्या शब्द की व्याख्या की और बिना संध्या भोजन नहीं करने का आह्वान किया। आचार्या जी ने छान्दोग्योपनिषद् के इस वचन की भी व्याख्या की।

एषां भूतानां पृथिवी रसः पृथिव्या अपो रसः। अपामोषधयो रस ओषधीनां पुरुषो रसः पुरुषस्य वाग्रसो वाच ऋग्रस ऋचः साम रसः साम्न उद्‌गीथो रसः।। स एष रसानाँरसतमः परमः परार्ध्योऽष्टमोयदुद्‌गीथः।।१.१.२-३।।

अर्थात् चराचर जीवों का सार पृथ्वी है, पृथ्वी का सार जल है, जल का सार वनस्पति हैं, वनस्पतियों का सार पुरुष है, पुरुष का सार वाक् (शब्द) है। वाक् का सार ऋग्वेद है, ऋग्वेद का सार सामवेद है और सामवेद का सार उद्‌गीथ जो (पवित्र) ओ३म् है। आठ रसों में, सर्वोत्तम यह आठवों, ओ३म् श्रेष्ठ से भी श्रेष्ठ है और सभी सारों (तत्वों) का सार है। इस उद्‌गीथ रस को पाकर आनंद ही आनंद मिलता है यही संध्या की उपलब्धि है।

इसी सम्मेलन को संबोधित करते हुए सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा प्रधान श्रीमान सुरेशचंद्र जी आर्य ने बताया कि पंचकुला हरियाणा में एक विशाल जमीन खरीदी गई है। वहां प्रकल्प तैयार हो रहे हैं। यहाँ से वैदिक विद्वान्, भजनोपदेशक और प्रचारक तैयार होकर निकलेंगे। यह सार्वदेशिक यानी अंतर्राष्ट्रीय केंद्र होगा। साथ ही उन्होंने यह भी बातया 25 से 30 करोड़ की लागत से महर्षि और उनकी शिखाओं पर आधारित एक फिल्म बनेगी, जिससे दृश्य श्रव्य प्रचार में बहुत सहायता मिलेगी। प्रधान जी ने महर्षि महिमा का गीत "बताए तुम्हें हम दयानंद क्या थे" गाया।

डॉक्टर वेदपाल जी ने सम्मेलन को संबोधित करते हुए बताया कि महर्षि ने काल और क्रिया, दोनों ही दृष्टियों से संन्ध्या को जड़ता से मुक्त कर विज्ञान अर्थात् सृष्टि के परमात्मा रचित संधिकाल उषा और

सन्ध्या से; तथा दिशा की अपेक्षा से भौगोलिक दिशा, संध्या करने वाले के शरीर औरप्राणायाम के अधिकतम लाभ हेतु वायु की दिशा से जोड़ा। आचार्य जी द्वारा सन्ध्या के अंगों की व्याख्या कर्मकाण्ड की लौकिक क्रिया और उत्क्रमण के प्रकाश में समयाभाव के कारण अधूरी रह गई।

पूजनीय स्वामी वेदानंद जी महाराज ने अध्यक्षीय उद्बोधन में महर्षि मनु के उद्धरण से कहा कि जा व्यक्ति संध्या नहीं करता, वह महा पापी है, और इस पाप का कोई प्रायश्चित भी नहीं है। उन्होंने कहा कि शिक्षा अर्जित करने के बाद भी यदि मानव जिज्ञासु बनकर पाखण्ड और अवैज्ञानिक बातों पर प्रश्न नहीं करके अन्धानुकरण करता है तो शिक्षा व्यर्थ है। विवेक की जागृति सन्ध्या से होती है। संन्धया से समाधि तक पहुँचा जा सकता है। स्वामी जी महाराज ने गंगोत्री वृत्तांत बताते हुए कहा कि वास्तव में गंगा गंगोत्री से भी आगे से आ रही है। हम गंगोत्री से मानते है। इस प्रकार ज्ञानगंगा का मूल स्रोत परमात्मा है, जिस तक पहुँचने के लिए संध्या का मार्ग है और परमात्मा को पाने पर आनन्द ही आनन्द की प्राप्ति होती है।

प्रश्न – शिक्षा किसको कहते हैं ?

उत्तर– जिससे मनुष्य विद्या आदि शुभगुणों की प्राप्ति और अविद्यादि दोषों को छोड़ के सदा आनन्दित हो सकें, वह शिक्षा कहाती है ।

प्रशन–विद्या और अविद्या किसको कहते हैं ?

उत्तर– जिससे पदार्थ का स्वरूप यथावत जानकर उससे उपकार लेके अपने और दूसरों के लिए सब सुखों को सिद्ध कर सकें वह विद्या और जिससे पदार्थो के स्वरूप को अन्यथा जानकर अपना और पराया अनुपकार करो, वह अविद्या कहाती है ।

प्रश्न–मनुष्यों को विद्या की प्राप्ति और अविद्याा के नाश के लिए क्या–क्या करना चाहिए ?

उत्तर–वर्णोच्चारण से लेके वेदार्थ ज्ञान के लिए ब्रह्मचर्य आदि कर्म करना योग्य है ।

प्रश्न– ब्रह्मचारी किसको कहते हैं ?

उत्तर– जो जितेन्द्रिय होके ब्रह्म, अर्थात् वेदिविद्याा के लिए आचार्यकुल में जाकर विद्या–ग्रहण के लिए प्रयत्न करे, वह ब्रह्मचारी कहाता है

चतुर्थ सम्मेलन :

विषयः आर्य समाज और चरित्र निर्माण

महर्षि दयानंद सरस्वती की अंतिम कर्मस्थली जोधपुर के महर्षि दयानंद सरस्वती स्मृति भवन में १३४ वें ऋषि स्मृति सम्मेलन के दूसरे दिन मिति अश्विन शुक्ल पक्ष नवमी संवत २०७४ विक्रमी शुक्रवार दिनांक २६ सितंबर २०१७ अर्थात् अनुपम क्षमादान दिवस को "आर्य समाज और चरित्र निर्माण" विषयक सम्मेलन में श्री कैलाश कर्मठ भजनोपदेशक के मधुर गीतों के बाद व्याख्यान करते हुए आर्य प्रतिनिधि सभा छत्तीसगढ़ से आए आचार्य अंशु देव जी ने मनुस्मृति के प्रसिद्ध श्लोक "**एतद्देशप्रसूतस्य सकाशादग्रजन्मनः । स्वं स्वं चरित्रं शिक्षेरन्पृथिव्यां सर्वमानवाः** ।। २.२०।।" बोलकर भारत के चरित्र का बखान किया। किंतु वर्तमान अवस्था देखते हुए राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी की भारत भारती की पंक्तियां "हम कौन थे क्या हो गए और क्या होंगे अभी। आओ विचारें आज मिल कर यह समस्याएं सभी।।" सामने रखी। आचार्य जी ने बताया कि महर्षि दयानंद ने तो ३ वर्ष के ऊपर के बालक–बालिकाओं का पारस्परिक गुरुकुल में अर्थात बालक का बालिकाओं के गुरुकुल में और बालिका का बालकों के गुरुकुल में प्रवेश निषेध का कहा था। शिक्षा से भी अधिक बल चरित्र पर देते हुए स्वामी जी सत्यार्थ प्रकाश में लिखते हैं यदि कोई विद्वान ना बन पाए तो ना सही, धर्मात्मा तो अवश्य ही बनना चाहिए। अर्थात् आचरण सबसे महत्वपूर्ण है। महर्षि दयानंद के द्वारा अनुपम क्षमादान प्रदान करने के दिवस पर भावविभोर हुए आचार्य जी ने आव्हान किया कि हम सभी यहां से "कृण्वंतो विश्वमार्यम्" का संकल्प लेकर ऋषि की इस ऐतिहासिक कर्मस्थली से जाएँ और ध्यान रखें कि व्यक्ति दूसरों के आचरण को देखकर प्रभावित होता है। अतः हम महर्षि दयानंद सरस्वती द्वारा स्थापित चरित्र के प्रतिमान को सामने रखें और तदनुसार अपना आचरण श्रेष्ठ बनाएँ।

स्वामी वेदानंद जी महाराज ने कहा कि आज के प्रतिस्पर्धा के युग में शासक और शासित के तीन युग्म है। मूर्खों पर विद्वान का, निर्बल पर बलवान का और निर्धन पर धनवान का शासन है। किंतु चरित्र इन तीनों ही युग्मों से निरपेक्ष है। स्वामी जी ने बताया कि चरित्रवान ही आर्य है और चरित्रहीन दस्यु। सात मर्यादाओं का पालन करनेवाला चरित्रवान बनाता है। ये सात मर्यादाएँ है–सत्य बोले, ब्रह्म हत्या व भ्रूण हत्या न करे, पराई वस्तु की अपेक्षा न करे, ब्रह्मचर्य पर रहे, संग्रह की वृत्ति से दूर रहे, वेद स्वाध्याय नित्य करे और संध्या में कभी प्रमाद न करे। स्वामी जी ने वरुण के तीनपाशों की चर्चा की चर्चा करते हुए मर्यादाओं के पालन से जीवन को ऊँचा उठाने को कहा।

सम्मेलन में व्याख्यान करते हुए डॉक्टर वेद पाल जी ने कहा कि कोई भी संगठन तभी तक जीवित रहता है जब तक वह आंदोलनात्मक रहता है। इसके साथ ही यह भी विचारणीय है कि बिना संगठन के आंदोलन सफल नहीं होता। महर्षि दयानंद सरस्वती ने तो बहुआयामी आंदोलन चलाया था। महात्मा फुले के शुद्रातिशूद्रों की अर्थात् अछूत

विद्यालय में महर्षि को आमंत्रण मिला था और महर्षि गए भी। महर्षि ने १८७३ से लेखन प्रवाह भी तेज कर दिया। कई मार्चों पर महर्षि सक्रिय थे। आपने कहा कि चरित्र शारीरिक नियंत्रण मात्र नहीं वरन् मनुष्य जीवन के समग्र आचरण में शुद्धि का नाम है। महर्षि दयानंद सरस्वती ने अपने समय में बहुत से संगठनों के होते हुए भी, उनसे ना जुड़कर , आर्य समाज की स्थापना इसीलिए की कि उन संगठनों में कहीं न कहीं चरित्र का अभाव था जो हमारे चरित्र नायक महर्षि को स्वीकार नहीं था। ब्रह्म समाजियों में देश भक्ति अति न्यून थी। बाबू केशव चंद्र सेन कहते थे कि पैगंबर मोहम्मद और ईसा मसीह उनके दिल के बहुत करीब थे। इसीलिए महर्षि ने आर्य समाज की स्थापना की और इसके नियमों को चरित्र की खान बनाया। महर्षि की इस दूरदृष्टि से आर्यसमाज के नियम भी मनुष्य के समग्र चरित्र के निर्माण को निश्चित करने वाले है और आर्य समाज का इतिहास इस बात का साक्षी है कि इसके अनुयायियों ने सच्चरित्रता के प्रतिमान स्थापित किए है। आर्य समाज चरित्र रक्षा और चरित्र निर्माण के दायित्व का आज भी निर्वहन कर रहा है। आर्य समाज के सदस्यों में चरित्र के मानदंड कितने उच्च थे इसका उदाहरण देते हुए आचार्य जी ने जालंधर आर्य समाज का एक किस्सा सुनाया जिसके एक वकील सभासद ने इस कारण से त्याग पत्र दे दिया कि उनका आर्य समाज के १0 में से सिर्फ एक नियम पर विश्वास थोड़ा कमजोर था। अतः आर्य समाज के नियमों के प्रति निष्ठा में कमी देखते हुए उन्होंने स्वयं को आर्यसमाज के सभासद होने के योग्य ना समझा और त्याग पत्र दे दिया, जिसे सभा ने स्वीकार भी किया। आचार्य जी ने आर्य की शब्द की एक व्युत्पत्ति इंगित करते हुए बताया कि जो दूर और समीप हो, अर्थात् अविद्या और असत्य से जो दूर रहता हो और विद्या, सत्य और वेद के समीप रहता हो, वह आर्य होता है।

अध्यक्षीय उद्‌बोधन में स्वामी शिवानंद जी महाराज ने कहा कि आर्यसमाज का मंच विश्व में सर्वोत्तम मंच है। भारत में मुस्लिम आक्रमण ने दावानल की तरह काम किया जो वृक्षों के ऊपरी भाग को जला देती है किंतु जड़ें सलामत रहती है। हम उस आक्रमण से सुधार एवं जागृति रूपी वर्षा जल से उबर गए। किंतु अंग्रेजो ने हमारी जड़ों अर्थात इतिहास, धर्म ग्रंथ और युवकों को पथभ्रष्ट करने का काम बहुत भारी स्तर पर किया, जिसके कारण अंग्रेजों के चले जाने के बाद भी हम सांस्कृतिक और चारित्रिक रुप से उनके गुलाम बने हुए हमारी जड़ों को ढूंढ रहे हैं । इस अंधियारे के माहौल में यदि कहीं रोशनी है तो आज भी आर्य समाज के रूप में ही है। इस का इतिहास गौरवमय रहा है, और आर्य समाज हर विषम परिस्थिति से उबरकर गौरवमय इतिहास

बनाएगा। स्वामी जी महाराज ने कहा कि मोहम्मद बिन कासिम से पूर्व आठ आक्रमणकर्ता भारत पर हमलावर बनके आ चुके थे। किंतु हमने मुस्लिम आचार स्वीकार नहीं किया, आज भी नहीं कर रहे हैं। उत्तर प्रदेश में सरकार द्वारा कत्लखाना बनाए जाने पर ६ सितंबर १६६४ को स्वामी जी महाराज के नेतृत्व में हुए आंदोलन में गाजियाबाद में मायावती के गांव के जंगल में कत्लखाना तोड़ दिया गया। स्वामीजी पर राष्ट्रीय सुरक्षा कानून लागू किया गया। जेल में बताया कि चालीस में दिन हाई कोर्ट में प्रस्तुत होना होगा, जहां तीन जन सुनवाई करेंगे। चालीस दिन बाद हाईकोर्ट की लखनऊ शाखा में पच्चीस मिनट की पेशी हुई। स्वामीजी ने कहा कि राष्ट्रीय सुरक्षा कानून देश के दुश्मनों पर लगाया जाता है। मैं देश का दुश्मन नहीं हूं क्योंकि मैं आर्य समाजी हूं और आर्यसमाजी देशभक्त होते हैं। इस पर जज ने पूछा कि क्या सिर पर लिखा होता है। इसपर स्वामीजी ने इसका प्रमाण माइकल ओ डायर की किताब "इंडिया एज़ आई न्यू इट" से देते हुए कहा कि डायर ने लिखा है कि जलियॉवाला बाग हत्याकांड इसलिए किया था कि अंग्रेजों को विश्वास था कि इसके बाद भारतीय सिर उठा कर नहीं जिएंगे। किंतु इतने भयानक हत्याकांड के बाद जब वह भारतीय बच्चों की ऑखों से ऑखें मिलाकर देखते तो पाते कि बच्चे भी आंखें तरैर रहे हैं।

यह क्रांति का जोश था। लेखक ने लिखा है कि जितने क्रांतिकारी अंग्रेजों के संपर्क में आए उनमें से नब्बे प्रतिशत आर्य समाजी और दयानंद के शिष्य थे। स्वामी जी ने बताया कि भारतीय संसति को नष्ट करने के लिए अंग्रेजों ने सात काम किए और सभी कोलकाता में किए, पहला काम कोलकाता को राजधानी बनाया, दूसरा , कोलकाता में छावनी बनाई, तीसरा काम कोलकाता में कत्लखाना स्थापित किया, चौथा काम कोलकाता में शराब की दुकानें खोली, पॉचवा काम कोलकाता में वेश्यालय खोले, छठा काम कोलकाता में १७७३ में अंग्रेजी न्यायालय की स्थापना की और सातवॉ काम कोलकाता में पहला कान्वेंट स्कूल खोला।

आर्यों की श्रेष्ठता को रेखांकित करने वाला एक और उदाहरण स्वामी जी महाराज ने दिया १८ जुलाई २०११ को भारतीय राजदूत एस जयशंकर को चीनी प्रशासन ने आमंत्रित किया, जहॉ उन्होंने पाया कि नास्तिक माओत्सेतुंग ने लालकिताब में कहा हैं कि जो जीवात्मा हजारों वर्षों तक शुभ कर्म करता है उसे भगवान भारत में आर्यों के घर जन्म देता है। और स्वामी जी महाराज को मुक्त कर दिया गया। ऐसे चरित्र की जननी आर्यसमाजों में ऐसे ही चरित्र का निर्माण हमारी जिम्मेवारी है। इस सम्मेलन का सफल संचालन आर्य समाज भीनमाल के श्री राजेश आर्य ने किया।

पंचम सम्मेलन :

विषय: "पितृयज्ञ का महत्त्व और प्रकार"

महर्षि दयानंद सरस्वती की अंतिम कर्मस्थली जोधपुर के महर्षि दयानंद सरस्वती स्मृति भवन में १३४ वें ऋषि स्मृति सम्मेलन के तीसरे दिन विजयादशमी संवत २०७४ विक्रमी शनिवार दिनांक तीस सितंबर २०१७ को "पितृयज्ञ का महत्त्व और प्रकार" विषयक सम्मेलन में भजनोपदेशक श्री कैलाशजी कर्मठ ने भजनों के बीच कहा कि मन को सुमन न बनाओगे तो दुश्मन बनेगा।

सम्मेलन को संबोधित करते स्वामी सुखानंद जी, अधिष्ठाता, गुरुकुल फतूही, गंगानगर ने कहा कि माता पिता और वृद्धों को नित्य सम्मान देना, उनकी देखरेख करना और उनसे इच्छा पूछकर उसे पूरा करना चाहिए। स्वामी जी ने उदाहरण देते हुए कहा मां बिच्छू अपने नवजात बच्चों का भोजन बन जाती है; एक गर्भिणी को जब पता चला कि गर्भ की हालत अच्छी नहीं है और या तो शिशु को बचाया जा सकता है या मॉ तुरन्त कहती है– मुझे मर जाने दीजिए, मेरे बच्चे को बचा लीजिए; एक नाव में गुरु शिष्य में से एक बच सकता है तो गुरु ने हार्दिक इच्छा प्रकट की कि शिष्य बचे तथा शिष्य ने अपने गुरु के बचने की इच्छा प्रकट की निर्जन द्वीप पर पहुंचे पिता–पुत्र। मदद के लिए आई नाव पर एक ही व्यक्ति चढ़ सकता था। पिता ने अपने पुत्र को जबरदस्ती चढ़ा कर भेज दिया कि मैंने तो जीवन जी लिया, तुम्हें बहुत जीना है । ऐसे जीवनदाता होते हैं पितर। आचार्य ने "मातृ देवो भव पितृ देवो भव आचार्यदेवो भव" को यथार्थ में चरितार्थ करने पर बल दिया।

स्वामी राजेन्द्र जी योगी ने महर्षि को श्रद्धांजलि स्वरूप ऋषि को समर्पित गीत सुनाया। स्वामी जी ने कहा कि हमारे ऋषियों ने बहुत सोच समझकर पितृयज्ञ को पंचमहायज्ञ में मिलाया। उन्होनें कुछ दारुण उदाहरणों की चर्चा की जिनमें विदेश में रह रहे एक पुत्र के घर आने पर अपनी मां को कंकाल के रूप में पाने की बात भी सम्मिलित है जो कुछ ही दिनों पहले अखबारों में सुर्खियों में भी आई थी। स्वामी जी ने बताया कि आज विश्व के ६७ देशों में आर्य समाज है। यदि एक एक व्यक्ति तैयार हो जाए तो पाखंड समाप्त हो जाए। स्वामी जी ने कहा कि उन्हें माताओं से अत्यधिक आशा है क्योंकि माता निर्माता होती है। इसलिए माताएँ संतान गहनों से भले न सजाएँ, डिग्रियाँ भले ना दिलाएँ, संपत्ति भले न दें किंतु संस्कार अवश्य लेना और संस्कार अवश्य देना। क्योंकि श्रीराम का निर्माण करना हो तो स्वयं को कौशल्या बनना पड़ेगा; श्रीष्ण का निर्माण करना हो तो स्वयं को नंद यशोदा बनाना पड़ेगा। इसलिए पहले स्वयं का निर्माण करो फिर उत्तम संतति का निर्माण करो।

आचार्य चंद्रेश जी ने कहा कि यह संसार सागर है, जिसमें हम डूब रहे हैं। महर्षि ने तैरने के लिए यथायोग्य नौकाएँ दी है। गृहस्थों को पंचमहायज्ञ रूपी नौका दी जो हम

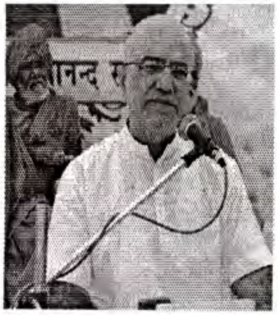

पकड़े रहे, तो ही पार होंगे। आचार्य जी ने कहा– महर्षि को मानते हो, अच्छी बात है। कुछ महर्षि की भी मानो! इसी प्रकार वेदों को मानते हो, अच्छी बात है। कुछ वेदों की भी मानो! आचार्य जी ने तीन प्रकार के नास्तिक बताए। पहले कम्युनिस्ट आदि जो परमात्मा को मानते ही नहीं। दूसरे अनीश्वर को ईश्वर मानने वाले अर्थात जो ईश्वर के वास्तविक स्वरुप को नहीं मानते। तीसरे ईश्वर को जानने वाले, मानने वाले, किंतु नहीं अपनाने वाले। जब ऐसे लोगों से यम–नियम, आत्मा परमात्मा की बातें करते हैं तो यह लोग कहते हैं जमाना बदल गया। जबकि यथार्थ यह है प्रति नहीं बदली, सूर्य ने अपने गुण नहीं बदले, चंद्रमा ने अपने गुण नहीं बदले, बदला तो सिर्फ मानव है! क्यों? आचार्य जी ने कहा कि संस्कारों की कमी से मानव बदला है। योगेश्वर श्रीकृष्ण और माता रुक्मणी ने उत्तम, रूपवान्, संस्कारवान्, वीर संतान की प्राप्ति के लिए १२ वर्षों तक बद्रिका वन में ब्रह्मचर्य पूर्वक तप किया और फिर प्रद्युम्न जैसे श्रीकृष्ण की मानों प्रतिकृति को जन्म दिया। हमें ऋणी होना चाहिए महर्षि दयानंद सरस्वती का, जिन्होंने हमें संस्कार विधि के रुप में मानव निर्माण की फैक्ट्री उपलब्ध कराई है। दूसरी तरफ टीवी राक्षस है। दूसरे बॉलीवुड में बैठे एक लाख लोग भारत के १२५ करोड़ लोगों का दिमाग खराब कर रहे हैं। संस्कार चाहो तो इन्हें त्यागो। अपने माता–पिता के पॉव छू आशीर्वाद लो उनके दुःख सुख पूछो, उनकी इच्छाओं की पूर्ति करो, पितृयज्ञ को सफल बनाना है तो नियोजित संस्कारवान् संतान का निर्माण करना पड़ेगा!

सम्मेलन में व्याख्यान करते स्वामी शिवानंद जी महाराज ने कहा कि हिंदू भटक चुका है, उसकी बुद्धि का स्तर इतना नीचे चला गया है कि कोई सोच नहीं सकता। आर्य समाज का यही प्रयास है कि हिंदू भले ही गालियां देवें किंतु वह सुरक्षित रहे। कंधार विमान अपहरण कांड पर बोलते हुए उन्होंने कहा की अपहृत विमान के पायलट ने तत्कालीन प्रधानमंत्री वाजपेयीजी के विमान के पायलट को अपहरण की सूचना दी। हवा में ही घेरने की व्यवस्था करने को कहा। किंतु बाजपेयीजी चुप रहे। अपहृत विमान के पायलट ने इंधन कम होने का बहाना कर अमृतसर हवाई अड्डे पर विमान उतार ४८ मिनट रोके रखा। किंतु गृहमंत्री आडवाणी जी कुछ नहीं कर पाए। यदि विमान का टायर गोली मारकर पंक्चर कर दिया होता तो और अधिक रूकने और कमांडो ऑपरेशन चलाने का अवसर मिल सकता था। किंतु कुछ नहीं किया। ६0 करोड़ लेकर पत्रकारों के साथ श्री जसवंत सिंह कंधार पहुंचे। वहॉ पर भारतीय पत्रकारों ने अपने अफगान पत्रकार मित्रों से कहा कि कुछ ऐतिहासिक चीज दिखाओ तो अफगान पत्रकार उन्हें एक चौकी पर ले गए, जिसपर बड़े और मजबूत जूते पड़े थे। वहॉ आने वाले लोग उस चौकी पर पड़े जूते उठाकर उस चौकी पर लगा रहे थे। जब भारतीय पत्रकारों ने इसका रहस्य पूछा, तो उन्होंने बताया कि यह पृथ्वीराज चौहान की कब्र है। क्योंकि उसने हमारे सुल्तान को मारा था, इसलिए इस काफिर की कब्र पर आज तक भी जूते मारे जाते हैं। शताब्दियॉ बीत गई हैं। लेकिन हिंदू है कि पत्थर पूजते पूजते उनकी बुद्धि भी पत्थर हो गई है और वे हिंदुओं का विनाश करने वाले, ललनाओं की लाज लूटने वाले लोगों की मजार पर जाकर सर फोड़ते हैं। शिवलिंग पर दूध चढ़ाने वाले उसे पत्थर मानकर ही दूध चढ़ाते हैं। अन्यथा एक लोटा दूध में ५0 मिलीलीटर दूध ही नहीं डालते

बल्कि पूरा लोटा ही दूध से भरते। हिंदुओं को मां को मां कहने में शर्म आती है, किंतु गधों को बापू बना रहे हैं, बेटियों की इज्जत लूटवा रहे हैं। स्वामी जी ने कहा कि देवता अर्थात माता पिता, सास–ससुर, गुरु गुरुमाता, आदि की सेवा ना करने वाला 1000 जन्म भी वापस मानव जन्म नहीं पाएगा। स्वामी जी ने ८ हाथों वाली दुर्गा से राजा शालिवाहन की बेटी, वीर नारायण की माता और दलपत शाह की पत्नी रानी दुर्गा को महान् माना जिसने १५६६ में सरफुद्दीन की सेना को धूल चटाई थी। इसके विपरीत ८ हाथ वाली दुर्गा पर चढ़ाया हुआ एक गिलास दूध भी कुत्ते चाटते हैं। अतः जीवित पितरों की यथार्थ पूजा करनी चाहिए यही पितृयज्ञ है।

डॉ वेदपाल जी ने कहा कि समाज के दो रूप होते हैं। एक मूर्त रूप जो सबको दिखाई देता है। दूसरा अमूर्त रूप जो संबंधों में टिका रहता है, अर्थात् सामाजिक संबंध अमूर्त रूप पर आधारित होते हैं। कर्मकांड में विराट साधनों वाले यज्ञ, जिनको छोटे–बड़े सेठ साहूकार भी कराने की सामर्थ्य नहीं रखते, बल्कि राजा नगरसेठ इत्यादि लोग ही जिन्हें करा सकते हैं– उन्हें भी मात्र "यज्ञ" का नाम दिया। किंतु जिन यज्ञों में अल्प द्रव्य और समय से काम चल जाता है उन्हें "महायज्ञ" कहा गया है; क्योंकि वे मनुष्यता के आधार हैं। इन्ही पॉच पंचमहायज्ञों में पितृयज्ञ भी एक है। चूंकि समाज में संबंध टूट रहे हैं, अतः महायज्ञ की अत्यधिक आवश्यकता है। डॉक्टर वेद पाल जी ने धर्मव्याध एवं औरंगजेब के उदाहरण दिए कि कहां सम्राट औरंगजेब पितृ घातक व्यक्ति था और कहाँ धर्मव्याध माता पिता का भक्त। टूटते रिश्तों के कारण महायज्ञों की आवश्यकता है। अल्प काल और अल्पद्रव्य साध्य इन यज्ञों से रिश्तों को सिद्ध किया जा सकता है।

अध्यक्षीय उद्‌बोधन में स्वामी वेदानंद जी महाराज ने यजुर्वेद के मंत्र को उद्धृत करते हुए कहा कि माता पिता, दादा दादी, परदादा परदादी और उनसे पूर्व के भी जीवित पुरखों की सुश्रुषा करनी चाहिए। स्वामी जी ने वेद वेदांगों का सार ज्ञान व तदनुसार कर्म को बताया। उन्होंने कहा ऐतरेय ब्राह्मण के अनुसार ८ वसु ११ रुद्र १२ आदित्य और इंद्र तथा वरुण यह ३३ देवता तीन प्रकार के होते हैं। हविर्भाव देवता हवि खाने वाले होते हैं अर्थात उन्हें अग्नि से हवि मिलती है। स्तोमभाक् देवता माता पिता आचार्य अतिथि और विद्वान होते हैं जो स्तुत्य होते हैं, पूजनीय होते हैं, श्रद्धा व सेवा के पात्र होते हैं। तीसरे छन्दोभाक् देवता होते हैं जो तरंग रूप में होते हैं। स्वामी जी ने बताया की स्तुति चार रूप में होती है। हमें अपने से बड़ों की स्तुति करनी चाहिए, सम्मान करना चाहिए, सेवा करनी चाहिए – यही पितृयज्ञ है। हमारे पुरखे ज्ञान के भंडार होते हैं, अनुभवी होते हैं, अतः उनका आदर करना ही चाहिए।

स्मृति भवन न्यास जोधपुर में १३४ वाँ ऋषि स्मृति सम्मेलन की प्रमुख झलकियाँ

महिला सम्मेलन में डॉ.नुपुर भाटी का अभिनन्दन

Postal Reg. Jodhpur/434/2015-17
जोधपुर आर एम एस द्वारा वितरण

Date of Print 5-10-2017
Date of Posting 9,10-10-2017

केन्द्रीय कृषि व किसान कल्याण राज्यमंत्री गजेन्द्रसिंह शेखावत, मंचस्थ विद्वान एवं न्यासी

केन्द्रीय कृषि कल्याण मंत्री
श्री गजेन्द्रसहिजी शेखावत

नाटक की प्रस्तुति देते हुए आ. गु. क. महाविद्यालय की छात्राएँ

केन्द्रीय कृषि कल्याण मंत्री श्री गजेन्द्रसहिजीशेखावत
दानदाताओं का उत्साहवर्धन करते हुए

दानवीर आर्यश्रेष्ठी ठाकुर विक्रमसिंहजी
का सम्मान करते हुए

आर्यवीर अशोक अष्टांग योग पर चर्चा
करते हुए

सत्वाधिकारी महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास के लिए प्रकाशक व मुद्रक विजयसिंह भाटी द्वारा महर्षि दयानन्द सरस्वती स्मृति भवन न्यास, महर्षि दयानन्द मार्ग, मोहनपुरा पुलिया के पास जोधपुर (राज.) से प्रकाशित एवं सैनिक प्रिण्टर्स, मकराणा मौहल्ला केरू हाऊस जोधपुर फोन 9829392411 से मुद्रित ।

सम्पादक माबाईल नं. 9460649055